अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ का साप्ताहिक मुखपत्र

भूदान-यज्ञ

लोकनागरी, ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसक क्रांति का संदेशवाहक

सौर भाद्र, २२ शक १८७९ सम्पादक : धीरेन्द्र मजूमदार

वार्षिक मूल्य ६) एक प्रति २ आना

वर्ष-३, अंक-५० राजघाट, काशी शुक्रवार, १३ सितम्बर, '५७

व्यक्ति के आंतरिक जीवन की क्रांति ही सामाजिक क्रांति की आधारशिला है। आज की समाज-व्यवस्था मूलतः बदल डालने की आकांक्षा बहुत से लोग रखते हैं और उसके लिए साम्यवादी या अन्य रास्तों का स्वीकार भी करते हैं, लेकिन ऐसे कितने ही उग्र क्रांति-मार्गों का अवलम्बन करने पर भी, जब तक व्यक्ति के आंतरिक जीवन में मूलभूत परिवर्तन नहीं होते हैं, तब तक समाज अनिवार्य रूप से जड़ ही बना रहेगा। वस्तुतः समाज की बाह्य अवस्था में परिवर्तन करने से क्रांति नहीं हो सकती, बल्कि बाह्य परिवर्तनों पर ही निर्भर रहने के कारण हम अपना जीवन खोखला तक बना डालते हैं। व्यक्ति-जीवन में क्रांति किये बिना चाहे जितने कानून हम बना डालें, वे भी सामाजिक पतन को नहीं रोक सकते!

आपके और मेरे परस्पर-संबंधों में यदि मूलभूत परिवर्तन हुआ, तो ही सच्ची क्रांति होगी। परस्पर के संबंधों में ऐसी जो क्रांति होती है, वही सामाजिक क्रांति है और यह क्रांति जड़ नहीं होती है, सच्चे अर्थों में निर्माणशील रहती है।

—जे० कृष्णमूर्ति

[मानचित्र में ज़िलों के नाम के नीचे उस जिले में प्राप्त कुल ग्रामदानी गाँवों की संख्या है। मानचित्र में कुछ प्रान्तों की संख्याओं में एवं दाहिनी ओर दिये हुये जोड़ में कुछ फर्क है, जिसका कारण है, जोड़ के अंक ताजे हैं, जो नक्शे में नहीं जुड़ पाये। —संपादक]

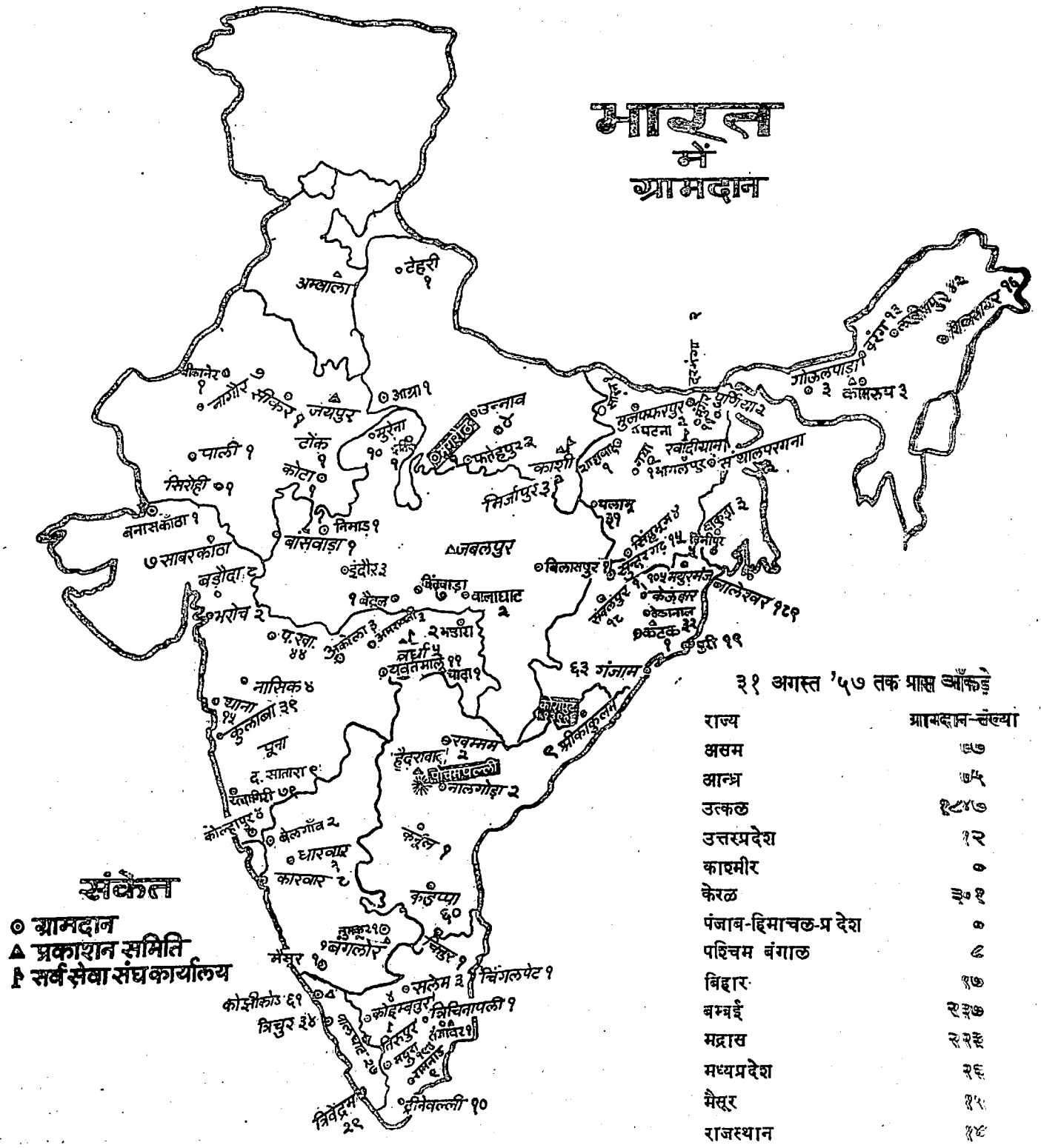

31 अगस्त '५७ तक प्राप्त आँकड़े

राज्य	ग्रामदान-संख्या
असम	६७
आन्ध्र	७५
उत्कल	१८४७
उत्तरप्रदेश	१२
काश्मीर	०
केरळ	३०१
पंजाब-हिमाचल-प्रदेश	०
पश्चिम बंगाल	८
बिहार	१७
बम्बई	२३७
मद्रास	२२६
मध्यप्रदेश	२६
मैसूर	३१
राजस्थान	१४
ग्रामदानी गाँवों का कुल जोड़	२९३२

www.vinoba.in

उद्योगपतियों के खोखले दावे!

(वैकुंठलाल मेहता)

पिछले कई महीनों से देश के सर्वाधिक सुसंगठित उद्योगों के प्रतिनिधि 'औद्योगीकरण करो, उत्पादन करो, अन्यथा नष्ट हो जाओगे' के नारे लगा रहे हैं। आय कर के सर्वोच्च स्तर पर पहुँच चुकने पर भी इन उद्योगपतियों को सन्तोष नहीं है। राज्य से व्यवसाय की स्वतंत्रता एवं पूँजी की तथा अन्य सुविधाएँ प्राप्त कर वे संयुक्तराष्ट्र अमेरिका के उद्योपतियों की बराबरी करने के स्वप्न देखते हैं। लेकिन वैसा औद्योगीकरण हो जाने पर कौन नष्ट होगा, इसकी उन्हें कोई चिन्ता नहीं।

प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि में उपभोग्य वस्तुओं के उत्पादन का संकेतांक ११०·४ से १३५·४ बढ़ा, परन्तु कारखानों में इसी अवधि में रोजगारी का अंक १०१·३ से केवल १०५·२ हुआ। **स्पष्टतः रोजगारी के अवसर बढ़ाने की योजना का जो उद्देश्य है, वह सफल नहीं हुआ। कारखानों में काम करने वालों की संख्या २५,६७,००० से २६,३४,००० हुई, जब कि अनुपात में कम होने पर भी तथा इस अवधि में उनका उत्पादन घट जाने पर भी, छोटे उद्योगों के काम करने वालों की संख्या १,१५,८२,००० से बढ़कर १,१८,४९,००० हो गयी।**

राष्ट्रीय योजना का दूसरा उद्देश्य संपत्ति और आय की असमानताएँ घटाना है। हमारे पास संपत्ति के कोई अधिकृत आँकड़े नहीं हैं, परन्तु आय-कर-पत्रकों से कृषि के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में होनेवाली आय के परिवर्तनों का पता लगता है। इन तालिकाओं को देखने मात्र से यह सिद्ध हो जाता है कि आयकर-योग्य आय में उच्चतर आयवाले समूह का ही बढ़ा हुआ भाग है, यद्यपि कुल करदाताओं की संख्या का यह उच्चतर आयवाला भाग बहुत ही न्यून है। इन तथ्यों के समक्ष यह भी विचारणीय है कि इन वर्षों में प्रति व्यक्ति औसत आय लगभग स्थिर रही है। वर्तमान भावों को दृष्टि में रखते हुए १९५५-५६ में प्रति व्यक्ति औसत आय २५२ रु० है, जब कि १९५१-५२ में यह २७४ रु० थी। उत्पादन वृद्धि से, जिसको उद्योगपति राष्ट्रीय प्रगति में अपना अद्वितीय योग मानते हैं, असमानताएँ घटना तो दूर रहा, अपितु स्थिति अधिक विषम हुई है।

यह कभी-कभी अबोध्य मानी जानेवाली घटना है कि राष्ट्रीय आय के बढ़ने के साथ-साथ उपभोग्य वस्तुओं पर उसी मात्रा में खर्च नहीं बढ़ा। आयव्यय के आँकड़ों के विश्लेषण से इस स्थिति का कारण स्पष्ट हो जाता है। उपभोग्य वस्तुओं की बढ़ती बिक्री के लिए यह आवश्यक है कि निम्न आर्थिक स्तर के अपार जनसमूह की आय बढ़े, ताकि उदर-भरण के बाद वे वस्त्र अथवा अन्य वस्तुओं पर खर्च कर सकें। वस्तुतः देश के विशाल जनसमूह की आय नहीं बढ़ी। आंकिक शास्त्र की दृष्टि से हमारा राष्ट्र पहले से कुछ अधिक धनवान् हो, परन्तु जनता के अधिकांश का जीवन-स्तर, जिसको उन्नत करना योजना का एक उद्देश्य है, उन्नत नहीं हुआ; यद्यपि बड़े उद्योगों को अपने द्वारा की गयी उत्पादन वृद्धि पर गर्व है।

उत्पादन पर के वर्तमान नियंत्रणों को हटाने की जो कोशिश में हैं, उनमें मुख्यतः सूती वस्त्र-उद्योग के प्रतिनिधि हैं। ये उद्योगपति हाथकरघा-बुनाई-व्यवसाय के रक्षणार्थ पाँच वर्ष पूर्व घोषित उस नीति से बेचैन हैं, जिसके अन्तर्गत कुछ किस्मों के वस्त्रोत्पादन पर नियंत्रण लगा है और उन पर लगी एक्साइज ड्यूटी से प्राप्त धन-राशि से छोटे पैमाने के वस्त्रोत्पादकों को वित्तीय सहायता दी जा सके।

इसी दिशा में दूसरा कदम यह था कि देश के उपभोग के लिए मिल द्वारा ५०० करोड़ गज कपड़े की उत्पादन-मर्यादा निर्धारित हो। साथ ही स्वचालित करघों को लगाने की आज्ञा इस स्पष्ट शर्त पर दी गयी कि इन करघों का उत्पादन निर्यात के लिए पृथक् रखा जाय। सुसंगठित उद्योगपतियों ने पहले इस प्रतिबन्ध को ढीला कराया। अब वे इसको पूर्णतः हटाने की माँग करते हैं। इसका एक ही परिणाम होगा। देश का बाजार सस्ते दाम पर तैयार किये कपड़े से भर जायगा, जिसकी प्रतिस्पर्धा हाथ-करघा-उद्योग को करनी पड़ेगी। संघर्ष-क्षेत्र कम होने के बजाय, जैसी कि केन्द्रीय सरकार की मंशा थी, बढ़ जायगा।

सूत या कपड़े का सचमुच अभाव होता, तो यह माँग कुछ न्याययुक्त होती। गत वर्ष जिन दिनों केन्द्रीय सरकार ने अपने वस्त्रोत्पादन कार्यक्रम की घोषणा की, कृत्रिम अभाव-संकट पैदा किया गया और यह दलील दी गयी कि मिलों का स्टाक इतना कम पहले कभी नहीं हुआ। थोक और फुटकर विक्रेताओं के स्टाक शामिल ही नहीं किये गये, न इस बात का विचार रखा गया कि वस्त्र-उद्योग और व्यवसाय ने बैंकों से असामान्य मात्रा में अग्रिम धन लिया है। अभाव की स्थिति सिद्ध करने के लिए भावों को ऊँचा चढ़ाये रखने की कोशिश की गयी।

इन दलीलों की निस्सारिता बाद की घटनाओं से विदित हो गयी। कृत्रिम चढ़े भाव गिरे, बिक्री की बढ़ती चमक-दमक खतम हो गयी, व्यापारी स्टॉक इकट्ठा होने की शिकायत करने लगे। उनके अधिक स्टाक रखने के लिए तैयार न होने पर मिलों में ही स्टाक जमा होने लगा। गत वर्ष के मध्य का अभावसंकट इस वर्ष के आरम्भ में प्रचुरता-संकट में परिणित हो गया। वास्तविक घटनाओं ने वस्त्र-उद्योगपतियों के प्रचार का साथ नहीं दिया, तब भी वे गतवर्ष के उत्पादन-प्रोग्राम की अवहेलना करने और उत्पादन पर से सब बंधन हटाने के लिए केन्द्रीय सरकार को बाध्य कर रहे हैं। पर वे एक तथ्य, जिसकी याद दिलाने में श्री मुरारजी देसाई नहीं चूके, भूल जाते हैं। जिस नियमन पर उद्योगपतियों को आपत्ति है, वह एक सुनिश्चित नीति का अंग है, जिसके अंतर्गत वस्त्र-उद्योग के असंगठित अंग को संगठित होने तथा संगठित हो अपनी विधि और प्रविधियों में सुधार करने का अवसर मिल सके। हाथकरघा-उद्योग से गत कुछ वर्षों में अधिकाधिक और पूर्णतर रोजगारी मिली है। जो प्रतिबन्ध मिलों पर लगे हैं, उनसे सहस्रों की बेरोजगारी मिटी है। इससे भी अधिक महत्त्व की बात यह है कि हमारे आधुनिक आर्थिक इतिहास में पहली बार एक कुटीर-उद्योग को आत्म-सुधार के लिए संगठन का अवसर मिला है।

सामाजिक नीति के अतिरिक्त, सूती वस्त्रउद्योग को माँग के लिए आर्थिक औचित्य की जाँच करना प्रसंगानुकूल होगा। गत ५ वर्षों में सूती वस्त्र का उत्पादन ४५९·९ करोड़ से ५३०·६ करोड़ गज हुआ, परन्तु रोजगारी इस अनुपात में नहीं बढ़ी। तीनों पालियों में लगे ७४०,६४० की संख्या बढ़कर ८,०६,७०२ हुई। वस्त्र-उद्योगपति तर्क करते हैं कि राष्ट्र के लिए वस्त्र की आवश्यकता का ५३५ करोड़ गज लक्ष्यांक बहुत न्यून निर्धारित हुआ है, जो यह ६७५ करोड़ गज होना चाहिए। केन्द्रीय सरकार द्वारा द्वितीय पंचवर्षीय योजना की समाप्ति पर कपड़े का प्रति व्यक्ति १८·५ गज लक्ष्य मान्य करने से पहले व्यवसायपतियों ने २२ गज के लक्ष्यांक की मान्यता के लिए प्रयत्न किया था। लेकिन केन्द्रीय सरकार के सामने टेक्सटाइल इन्क्वाइरी (कानूनगो) कमेटी और विलेज एण्ड स्माल स्केल इन्डस्ट्रीज (कृषि) कमेटी के प्रस्ताविक आँकड़े मौजूद थे। इन समितियों के प्रतिवेदनों के बाद देश में योजनाबद्ध विकास हुआ अवश्य है, परन्तु जैसा कि वस्त्र की उपलब्धिता से प्रतिबिम्बित होता है, प्रति व्यक्ति वस्त्र की माँग १६·८ गज से आगे नहीं बढ़ी। ऐसी दशा में यह समझना कठिन है कि आवश्यकता का अंक उद्योगपति क्यों बढ़वाना चाहते हैं? उद्योग के संबंध में कोई ऐसी बात नहीं हुई और न सामान्य आर्थिक दृष्टिकोण में ऐसा परिवर्तन हुआ जो इस दलील का समर्थन कर सके।

इसके विपरीत, वस्तुस्थिति यह है कि खाद्य और कच्चे माल के मूल्य काफी बढ़ जाने पर भी उपभोग्य-वस्तुओं के मूल्य का संकेतांक केवल ५·७ ही चढ़ा है। अब तक कपड़े और अन्य उपभोग्य वस्तुओं के लिए माँग अपेक्षाकृत उत्साहहीन रही है। उद्योगपतियों का यह तर्क, कि उत्पादन पर लगे नियंत्रणों के कारण मूल्यवृद्धि की प्रवृत्तियाँ बढ़ेंगी, ठीक नहीं उतरता। उपभोग्य वस्तुओं, विशेषकर वस्त्रों के मूल्य न बढ़ने का कारण यह नहीं कि उद्योगपतियों की परोपकारी वृत्ति है। हमारी आर्थिक स्थिति की यह नग्न यथार्थता है कि योजना के अंतर्गत विकास के साथ वस्त्र जैसी आवश्यक उपभोग्य वस्तु की माँग नहीं बढ़ी।

उपभोग्य वस्तुओं के उत्पादक हमारे उद्योगों के वित्तीय ढाँचे के आकस्मिक अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि वस्त्र-उद्योग की आज जैसी सम्पन्न स्थिति पहले कभी नहीं रही। देश का यह एक पुराना सुसंगठित उद्योग है, जिसने कुछ वर्ष पहले अपनी शताब्दी मनायी थी। बीस वर्ष से अधिक काल तक इसे सुरक्षित बाजार मिला। राष्ट्र की स्वदेशी भावना पर यह पोषित और समृद्ध हुआ। लेकिन इस उद्योग के कर्णधारों को **यह न भूल जाना चाहिए कि इसके अभ्युदय से देश का व्यापक कुटीर उद्योग, हाथकताई मृतप्रायः हो चुकी है और हाथ-करघा-उद्योग, जो अकेला आज भी तमाम कारखानों को मिलाकर उनसे कहीं अधिक संख्या को आश्रय देता है, सदैव भयग्रस्त रहता है।** जनता द्वारा कर दाता तथा उपभोक्ता, दोनों रूपों में किये गये त्याग से लाभान्वित होकर अब वस्त्र-उद्योग को देश के औद्योगिक ढाँचे में अपने स्थान से सन्तुष्ट होना चाहिए एवं लघु उद्योगों को हानि पहुँचाकर अधिक अतिकृपा पाने का प्रयत्न न करना चाहिए। इन प्रयत्नों को छोड़ने पर वह अनौचित्यपूर्ण नीतियों का प्रतिपादन करने की अपेक्षा राष्ट्र की अधिक सेवा करेगा। समूचे राष्ट्रहित की दृष्टि से उत्पादन स्वयं इतना महत्त्वपूर्ण नहीं, जितना कि कृषक और श्रमिकों को अधिकाधिक उत्पादक काम मिलते रहना है, ताकि उनकी आय बढ़े। इस प्रकार हम चारों ओर से संपन्नता फैला सकते हैं।

(अंग्रेजी 'भूदान' से)

---

www.vinoba.in

ग्रामोद्योगों में यंत्रशक्ति और बिजली !

अ० वा० (अण्णासाहब) सहस्रबुद्धे

उत्पादन के साधन जैसे होते हैं, उसीके अनुसार उत्पादन की मर्यादा निश्चित हो जाती है। साधनों या उपकरणों में धीरे-धीरे सुधार इसी खयाल से होते रहे कि कम परिश्रम में ज्यादा काम हो। पहले आदमी कुदाली से खेती करता था। बाद में उसने पशु-शक्ति का उपयोग करना शुरू किया और हल से खेती करना प्रारम्भ हुआ। पहले के परिमाण में उतने ही समय में तीन गुना और चार गुना काम इस बदल से हुआ। इस दृष्टि से व्यक्ति की आवश्यकताएँ यदि बढ़ती जायँगी, तो उसको साधनों में भी अदल-बदल करना पड़ेगा। इन्हीं औजारों में सुधार के कारण उत्पादन के साधन चंद लोगों के हाथ में चले गये और उसमें से पूँजीवाद खड़ा हुआ। कुछ मालिक बन गये और सारे मजदूर रहे। खेती भी मालिकों के हाथ में चली गयी और बहुत से भूमिहीन बने या खेती के उत्पादन का हिस्सा लेने वाले मजदूर बने। लेकिन हमें यह साफ समझ लेना चाहिए कि जिन साधनों से उत्पादन होगा उसीसे उत्पादन की मर्यादा भी निश्चित हो जायगी।

उदाहरणार्थ, खेती के उद्योग को ही ले लीजिये। एक परिवार यदि खेती में अपने हाथ से काम करता रहेगा, कुदाली से ही खेती करेगा, तो एक एकड़, डेढ़ एकड़ से ज्यादा खेती नहीं कर पायेगा और डेढ़ एकड़ में भी एक तरह की ही फसल नहीं ले सकेगा, क्योंकि अलग-अलग समय पर अलग-अलग फसल होती है। ऋतु-परिवर्तन के साथ उसमें अदल-बदल करना पड़ता है। इसी कारण वह डेढ़ से दो एकड़ तक खेती कर सकेगा। यदि धान की ही खेती करना हो और १५ दिन में ही धान के ट्रान्सप्लान्टेशन को पूरा करना हो, तो १५ दिन में एक परिवार शायद एक एकड़ से ज्यादा धान की रोपनी, शुरू से अंत तक की सारी क्रियाएँ पूरी करके, नहीं कर सकेगा। लेकिन यदि कुछ धानखेती, कुछ शाक-तरकारी, और कुछ रबी की खेती उसको मिलेगी एवं खेती के लिए पानी का प्रबन्ध होगा, तो इस तरह की खेती को एक परिवार दो एकड़ तक ठीक ढंग से चला सकेगा। यदि बिल्कुल शास्त्रीय ढंग से वह खेती करेगा तो उसका उत्पादन २००) तक प्रति एकड़, प्रति फसल जायगा। कुल खेती से उत्पादन ४००) से ५००) तक होगा। यदि परिवार में दो कमाने वाले हैं, तो एक के पीछे साल भर में २००) मिलेगा। खेती से जो समय बचेगा, उसमें से यदि वह सूत कातेगा या ऐसे ही कच्चे माल का पक्का माल बनाने का काम करेगा, तो उसकी आमदनी प्रति व्यक्ति रुपये १००) तक बढ़ सकेगी। अर्थ यह हुआ कि एक परिवार की आमदनी ज्यादा से ज्यादा आज के मूल्यों के अनुसार ६००) तक जा सकेगी। अब सवाल यह है कि यह आमदनी करने के लिए उसको पूँजी कितनी चाहिए ? मेरा खयाल है कि यदि जमीन के दाम न लगाये जाँय या समाज की तरफ से उसको मुफ्त जमीन खेती के लिए दी जाय और समाज की तरफ से शास्त्रीय ढंग से खेती करने का प्रशिक्षण भी उसको मुफ्त मिले, तो तीन सौ की पूँजी से छः सौ से सात सौ तक का उत्पादन वह कर सकेगा। यह अनुमान है, इसके लिए कोई आधार नहीं है। इस दिशा में अभी तक देश में आँकड़े (स्टेटिस्टिक्स) नहीं निकले हैं।

इसके लिए उसको खेती में तथा दूसरे उद्योगों में कितना खटना पड़ेगा, कितना परिश्रम करना पड़ेगा, इसका यदि हिसाब लगाया जाय, तो सम्भव है कि उसको आठ या दस घंटे प्रतिदिन काम करना पड़ेगा और उतने परिश्रम से वह एक परिवार के पीछे ६००) की आमदनी करेगा। दो एकड़ उसको समाज की तरफ से भूमि मिलेगी और समाज की तरफ से अच्छी-से-अच्छी तालीम भी मिलेगी, तो-इतनी आमदनी उसको होगी।

सवाल यह है कि उसको दस घंटे आज परिश्रम यदि करना पड़ता है, तो उतना परिश्रम करते हुए वह बौद्धिक चिन्तन किस हद तक कर सकेगा ? मेरा नम्र अभिप्राय है कि यदि चार या पाँच घंटे के परिश्रम से ज्यादा शारीरिक परिश्रम आदमी को करना पड़ता है, तो शरीर को स्वस्थ रखने के लिए उसको और सारे समय विश्राम करना पड़ेगा। आठ-दस घंटे शारीरिक परिश्रम के बाद वह चिन्तन का काम ज्यादा नहीं कर सकेगा। इसलिए किसीको चार-छह घंटे से ज्यादा शारीरिक परिश्रम न करना पड़े, इस दिशा में हमें सोचना चाहिए या व्यक्ति को ऐसे साधन देने चाहिए, जिससे आधे परिश्रम में आज से दो गुना वह काम कर सके।

खेती से आमदनी ज्यादा भी हो सकती है। दो एकड़ द्वारा दो से ढाई हजार तक की आमदनी भी हो सकेगी, यदि हम मनीकाप लें और एक एकड़ के पीछे हजार पंद्रह सौ रुपये की पूँजी लगायें। इतनी पूँजी यदि हर कोई लगा सकता है और हर कोई यदि मनीकाप करने का सोचता है, तो उसकी आमदनी भी दो हजार की नहीं होगी; क्योंकि जिसको आज हम मनीकाप कहते हैं, वह सर्व-सामान्य फसल बन जायगी। इसलिए जहाँ खेती को एक कैपिटलाइज्ड इन्डस्ट्री बनाया गया है और उससे आमदनी बहुत बड़े पैमाने पर प्राप्त हो सकती है, उसको मैंने विचारार्थ नहीं लिया है। मैं जानता हूँ कि यदि एक अंगूर का बगीचा किया जाय, तो आज की परिस्थिति में छः हजार की कमाई हो सकती है। तम्बाकू से एक एकड़ में दो हजार से तीन हजार रुपये की आमदनी होती है। गन्ने की खेती से भी दो-ढाई हजार की आमदनी हो सकती है। खाने के पान की खेती हो, तो एक एकड़ में चार हजार की आमदनी होती है। एक परिवार आधे एकड़ की खेती को सँभाल सकता है। लेकिन आज के समाज में इन चीजों के जो अधिक दाम मिल रहे हैं, वे सही नहीं मानने चाहिए। आठ घंटे के परिश्रम से जितनी आमदनी एक परिवार को होती है, उतनी ही आमदनी दूसरे परिवार को भी होनी चाहिए। आज का जो प्राइस-स्ट्रक्चर है, उसमें चीजों के दाम बन गये हैं, इसको कुछ समय के लिए यदि छोड़ दिया जाय और परिश्रम के आधार पर प्राइस का मूल्यांकन किया जाय, तो शायद अनुभव यह आयेगा कि खेती तथा ग्रामोद्योग से एक व्यक्ति रोज आठ-दस घंटे काम करने पर एक रुपया रोजी से ज्यादा नहीं कमा सकेगा। एक परिवार में दो रुपये से ज्यादा आमदनी नहीं हो सकेगी, या सालभर में ६००) से ज्यादा आमदनी नहीं हो सकेगी। ६००) की भाषा में मैंने आमदनी का हिसाब लगाया है। उसमें आज का प्राइस-स्ट्रक्चर ध्यान में लिया गया है। चीजों के दाम यदि बढ़ेंगे या घटेंगे, तो आमदनी भी रुपयों में कम या ज्यादा होगी।

मेरे सामने सवाल यह है कि इस परिस्थिति को हम ध्येयवाद के रूप में समाज के सामने रखना चाहते हैं क्या ? एक परिवार को ६००) रुपये की आमदनी हम पर्याप्त समझते हैं क्या ? दूसरे सारे सवालों को सुलझाने पर भी हम इस सवाल का जवाब क्या देना चाहते हैं ? आज देश में पूँजी नहीं है। धीरे-धीरे देश की पूँजी बढ़ेगी। आज समाज में विषमता है। भूदान-मूलक क्रान्ति के द्वारा उसका भी रास्ता निकल आयगा। आज समाज में ज्यादा लोग अनपढ़ हैं। पर लिखे-पढ़े लोग शास्त्रीय ढंग से उत्पादन करने की दृष्टि से अनपढ़ लोगों से भी ज्यादा अनपढ़ हैं। आज का शिक्षण बदलने से इस चीज को हम बदल सकते हैं और यह सारा हमने हासिल कर लिया, ऐसा भी हम एक क्षण के लिए मानें, फिर भी उत्पादन के साधन यदि हमारे आज के ही रहने वाले हैं, तो हमें सालभर के शारीरिक परिश्रम करने के बाद ५-६ सौ रुपये से ज्यादा आमदनी नहीं होने वाली है।

अब तो धन और धरती बँटसी हो !

(प्रियतम भाई)

चेतो चेतो मनखां अब तो, धन और धरती बंटसी हो।
हक वाला रो हक देदयो, नहीं बाटिया अब तो सरसी हो॥
अंग्रेजा रौ ताज गयो देखो, राजा रौ गयौ राज।
शोषण रहग्यो ऊँच नीच अर, भेद भाव है आज।
जीणो दिन-दिन भारी होग्यो, गहरी खाया पड़गी हो॥ चेतो०
मेहनत जीरी दौलत वींरी, बोवे जीरो खेत।
धरती गूँजी अंबर गूँज्यो, चेत मनखां चेत।
हक लेवण री हवा चली है, बांटो धन और धरती हो॥ चेतो०
दो गौला है हक लेवण रा, मार काट या प्रेम।
एटम बम सूं दुनिया मिटसी, भौतिक युग री देण।
देवे विनोबा चेतणी "भूदान" करयां ही सरसी हो॥ चेतो०
दान करो पण दान नहीं है, भूखा ताईं भीख।
हक वाला रो हक देणो है, गीता री या सीख।
टूटी कड़िया मन री जुड़सी, प्रेम री डोरी बंधसी हो॥ चेतो०
धरती बंटसी मेहनत होसी, गाँव गाँव रो राज।
टाबर पढ़सी धंधा चलसी, हो सांचो स्वराज।
सबरो जीवन सुख सूं बीतै, स्वर्ग धरा पर आसी हो॥ चेतो०

www.vinoba.in

गांधी या सर्वोदय-विचार से काम करने वाले कार्यकर्ताओं के याने हम लोगों के रहन-सहन का दर्जा ऐसा है कि उनका प्रति व्यक्ति सालाना खर्चा तीन-चार सौ रुपये तक आता है और हम अपना जीवन सादगी का जीवन मानते हैं। श्रम-भारती, खादीग्राम में धीरेन्द्रभाई के मार्गदर्शन में श्रम के आधार पर सामुदायिक जीवन बिताने का एक प्रयोग चल रहा है। चार घंटे हर कोई परिश्रम करता है, चार घंटे बौद्धिक काम करता है। बौद्धिक काम के एक घंटे का उतना ही मूल्य माना जाता है, जितना चार घंटे के सख्त शारीरिक परिश्रम से एक घंटे के शरीर-परिश्रम का। वहाँ यह देखा गया है कि वे लोग आठ-बारह आने से ज्यादा कमाई नहीं कर पाते हैं और यदि हरएक को उसके आठ घंटे के शरीर-परिश्रम का मूल्य दो रुपया देना हो, तो उनकी आमदनी को रोज एक रुपये से सबसिडाइज़ करना पड़ेगा। परिवार में यदि दो आदमी काम करने वाले हैं और दोनों आठ घंटे काम करने वाले हैं, तो उतने परिश्रम से वे दो रुपये कमाते हैं और दो रुपये उनको सब-सिडाइज़ करने पड़ते हैं। माना यह जाता है कि आज की सामाजिक स्थिति में इस तरह सबसिडाइज़ करना पड़ेगा। लेकिन जब विषमता नहीं रहेगी, जब मूल्य या प्राइस स्ट्रक्चर 'समान परिश्रम का मूल्य समान', इस तत्व के आधार पर देश में बनाया जायगा और हरएक को समाज की तरफ से अच्छी से अच्छी मुफ्त तालीम मिलेगी और आज के उत्पादक साधन मिलेंगे, तो वह आदमी चार घंटे उत्पादक श्रम और चार घंटे बौद्धिक श्रम से दो रुपये कमा सकेगा, इस सिद्धांत को हमने माना है और आज की परिस्थिति में श्रमभारती में वैसे परिश्रम को हम सबसिडाइज़ करते हैं। मेरा नम्र सुझाव है कि ऊपर की परिस्थिति में भी आज के साधनों से वह आदमी ८ घंटे शारीरिक परिश्रम से एक रुपये से ज्यादा नहीं कमा सकेगा, जब तक उत्पादन के साधन, जो आज समाज में हैं, वे ही रहेंगे। अर्थशास्त्रियों को इस सम्बन्ध में गहराई से विचार-विमर्श करना चाहिए और यदि मेरे विचार गलत हैं, तो उसमें किस तरह की गलती है, उसके ऊपर भी विचार करना चाहिए।

सर्वोदय समाज में आज की चीजों के दामों में हरएक परिवार को सालाना कम-से-कम १२००) की आमदनी हो, परिवार में काम करने वाले दो आदमियों को चार-छह घंटे से ज्यादा शरीर-श्रम न करना पड़े, तो सर्वोदयवादियों को आज के उत्पादन के साधनों को आगे बढ़ाने का विचार करना पड़ेगा, टेकनॉलाजी से सुधरे हुए साधनों को इस्तेमाल करना पड़ेगा। खेती के लिए मनुष्य-शक्ति के साथ-साथ पशु-शक्ति का उपयोग करना होगा और ग्रामोद्योगों में मनुष्य-शक्ति के बदले यंत्र-शक्ति का या बिजली का उपयोग करना पड़ेगा!

कई लोगों की मान्यता है कि आज जो हमारे पास पशु-धन है, उसका यदि ठीक ढंग से उपयोग किया जाय, तो उनकी शक्ति से ही हमारे सारे प्रोसेसिंग के उद्योग चल सकते हैं। ऐग्रो-एकॉनामी उसीके आधार पर चलाई जा सकती है, इस सिद्धांत को भी मैं सनातन नहीं मानता हूँ। मेरा निजी अनुभव कम है, फिर भी जो कुछ है, उस पर से मैं यह कहना चाहता हूँ कि हमारे पास आज देश में जो पशुधन है, उतने पशुधन का योग्य पोषण हम नहीं कर सकते। आज उनका हम जो पोषण करते हैं, उस तरह के पालने से उनसे हमें पूरा काम नहीं मिल रहा है। २० करोड़ पशुओं की संख्या आज देश में है। उसके बदले दस करोड़ ही पशु-धन रहे। दो आदमियों के पीछे एक गाय या बैल है। उसके बदले चार आदमियों के पीछे या एक परिवार के पीछे एक गाय या बैल, भैंस या भैंसा रहे, इस दिशा में हमें विचार करना पड़ेगा। आदमियों को जैसे संतुलित आहार मिलना चाहिए, वैसे ही पशुओं को भी भरपेट और अच्छा खाना मिलना चाहिए। इस परिस्थिति को जब हम लायेंगे, तो आधे पशुओं से भी हमें आज का काम मिलेगा या उससे ज्यादा मिलेगा। फिर भी उस पशु-धन से हमारी इन्टेन्सिव खेती सँभाली जा सकेगी, लेकिन उनकी शक्ति से प्रोसेसिंग इन्डस्ट्रीज या ग्रामोद्योग नहीं चलाये जा सकेंगे!

आज धान की खेती में एक एकड़ से औसत हम दस-बारह मन धान लेते हैं। जौ, गेहूँ आदि पाँच मन तक ले लेते हैं। इन्टेन्सिव खेती की तरफ यदि हम जाते रहेंगे, बहुत अधिक मात्रा में सिंचाई का प्रबन्ध होगा, बारिश के एक-एक बूँद को बचाने की या संग्रह करने की योजना गाँव-गाँव में बनेगी, तो खेती को इन्टेन्सिव की तरफ ले जाने का रास्ता खुलेगा। उस परिस्थिति में आज से दो गुना, तीन गुना, चार गुना काम खेती में ही पशुओं से लेना पड़ेगा। खेती में आज बखर चलता है। बोने के पहले जहाँ तीन-चार बार बखर चलाया जाता है, उसके बदले यदि तीस-चालीस दफा चलाया जाय, तो सूरज के प्रकाश से, हवा से भूमि नाइ-ट्रोजन ज्यादा पैदा कर लेती है। उस परिस्थिति में खाद की मात्रा कम देनी पड़ती है और इतनी मेहनत के बाद तीन-चार गुना आमदनी ज्यादा हो सकती है। जितनी हद तक हम इन्टेन्सिव खेती की तरफ जायेंगे, उतना पशु-शक्ति का उपयोग खेती में ज्यादा करना पड़ेगा। खेती के तज्ञों से इस सम्बन्ध में विचार-विमर्श करना चाहिए, नये-नये आविष्कार करने चाहिए और निश्चित राय पर हम लोगों को पहुँचना चाहिए।

इसलिए पशुशक्ति का उपयोग हम ग्रामोद्योगों के लिए कर सकेंगे या पानी खींचने के लिए भी पशुशक्ति का उपयोग होता रहेगा, इस चीज को एक सनातन सिद्धांत के रूप में नहीं मानना चाहिए। यदि हरएक को चार या पाँच घंटे परिश्रम करना पड़े और कुछ बौद्धिक परिश्रम के लिए भी उसको अवकाश रहे, इस दिशा में यदि हमें कदम बढ़ाना हो, तो ग्रामोद्योगों को पशुशक्ति से या मनुष्य-शक्ति से चलाने के बदले हमें बिजली या उस तरह की किसी अन्य शक्ति का उपयोग करना पड़ेगा।

भारतवर्ष में १९६१ साल तक बिजली का प्रसार किस हद तक होने वाला है, उसकी कल्पना नीचे लिखे आँकड़ों से मिलेगी। पाँच हजार से नीचे की आबादी वाले १४ हजार गाँवों में बिजली पहुँचने वाली है। जिन गाँवों में बिजली जाने वाली है, वहाँ बिजली का उपयोग किस तरह से हो, इस दिशा में यदि हम लोग नहीं सोचेंगे, तो उसका लाभ पूँजीवादियों को ही मिलेगा। उनके द्वारा ही बिजली का उपयोग करा लेने की दिशा में कोशिश होती रहेगी।

बिजली केन्द्रित रूप से मिलती है। वह सारे गाँवों में निकट भविष्य में नहीं पहुँच सकती है। किसी गाँव में बिजली ले जाना हो, तो कम-से-कम ६० हजार से ७० हजार रुपये बिजली ले जाने का खर्च आता है। इतनी पूँजी आज देश के पास नहीं है। ये सारी चीजें सही हैं। लेकिन साथ-साथ यह भी सही है कि १९६१ के पहले १८ हजार गाँवों में बिजली जाने वाली है, जिसमें से १४ हजार गाँव ५ हजार की आबादी के नीचे के रहेंगे। इस परिस्थिति में क्या हम उदासीन ही रहेंगे या जहाँ-तहाँ हमारे काम चल रहे हैं, उसके इर्द-गिर्द में यदि बिजली आ जाती है, तो उसका उपयोग हमारे ग्रामोद्योगों में किस तरह से किया जाय, उसके बारे में सोचेंगे? खादी-ग्रामोद्योग में काम करने वालों को भी जहाँ-जहाँ बिल्कुल ही उसका उपयोग सहकारी तत्व पर किस तरह करना चाहिए, उसमें से शोषण न हो, बेकारी न बढ़े, घर-घर में बिजली के छोटे पैमाने के उद्योग शुरू हों, इस दिशा में सोचने की दृष्टि से विचार करना चाहिए। इतना ही नहीं, कुछ प्रयोग भी करने चाहिए। सेल्फ एम्प्लॉयमेंट की दृष्टि से बिजली का उपयोग किस तरह से हो, उसका स्पष्ट चित्र भी देश के सामने नहीं रखेंगे, तो बिजली का उपयोग केन्द्रित उद्योग ही करते रहेंगे और हमारे पाँव के नीचे की बालू दिन-प्रति-दिन खिसकती जायगी! आज हम रिक्त स्थान (वैकुअम) में नहीं रहते हैं। देश में यदि बिजली पैदा नहीं हुई होती, तो उसके लिए उदासीन हम रह सकते थे, लेकिन जहाँ-जहाँ खादीबोर्ड के इन्टेन्सिव काम चल रहे हैं या हमारे कार्यकर्ता बैठे हैं, उन गाँवों से बिजली जाती है और उसकी तरफ हम उदासीनता से देखते हैं, तो इसका अर्थ यह होगा कि हम परिस्थिति का सामना नहीं करना चाहते हैं! समय आया है कि हम लोगों को इस दिशा में गहराई से सोचना चाहिए और विकेन्द्रित उद्योग इस देश में कैसे खड़े किये जा सकेंगे और ग्रामोद्योगों के लिए बिजली आदि शक्तियों का उपयोग किस तरह से होगा, उसका अर्थशास्त्र हम देश के सामने रखें।

जापान देश में बिजली का उपयोग घर-घर में होता है, घर-घर में काटेज-इन्डस्ट्रीज की बेसिस पर उद्योग भी चलते हैं। बड़े-बड़े कल-कारखानों के पूरक पुर्जे बनकर इन सारे छोटे गृह-उद्योगों को चलाया जाता है। पूँजीवाद के ऊपर सारा अर्थशास्त्र का ढाँचा वहाँ खड़ा हुआ है। घर-घर तक उद्योग को उन्होंने 'डिफ्यूजन' के सिद्धांत के आधार पर फैलाया है। जब हम विकेन्द्रित उद्योगों की नींव डालना चाहते हैं, तो जापान से हमारा चित्र बिल्कुल अलग रहेगा। हम आर्थिक दृष्टि से गाँव की इकाई को मानते हैं। कुछ उद्योग गाँवों की इकाई तक ही चलते रहेंगे। पाँच-पचास गाँवों के समूह में कुछ उद्योग साथ में लेने पड़ेंगे और एक थाना तथा जिला भी कुछ उद्योगों के लिए एक आर्थिक घटक (यूनिट) बन सकेगा। सारा ढाँचा सहकारी तत्व पर हम खड़ा करना चाहेंगे। गाँव की हद तक गाँव वाले ही अपने अर्थ-शास्त्र के बारे में सोचेंगे और वे ही धीरे-धीरे आगे संगठित होकर जिला या प्रान्त तक पहुँचेंगे। इसे यदि विकेन्द्रित अर्थशास्त्र की बुनियाद मानते हैं, तो उसमें बिजली का उपयोग किस स्टेज में किस उद्योग के लिए करने से हम बिजली का उपयोग सही दिशा में कर सकेंगे, उसका जवाब हमें प्रत्यक्ष में मिलना चाहिए। उस दृष्टि से कुछ क्षेत्रों में खादीबोर्ड या उस तरह की अन्य संस्थाएँ प्रयोग के रूप में काम करें, यह आज अत्यावश्यक है।

———

www.vinoba.in

ललमटिया गाँव का कायापलट !

(गोकुलभाई भट्ट)

भूदान-ग्रामदान-कानूनों के विषय में विचार-विमर्श के लिए श्रमभारती-खादी-ग्राम (जि० मुंगेर, बिहार) जाने का प्रसंग प्राप्त हुआ था। श्रमभारती अपनी कई विशेषताएँ रखता है। उसका व्याप बढ़ता जा रहा है, साथ ही साथ उसकी गहराई भी विस्तृत होती जा रही है। सर्व-सेवा-संघ का दफ्तर गया से खादीग्राम आ गया है। श्रमभारती का कार्य जंगमरूप से उसके आचार्य श्री राममूर्तिजी भूदान-यात्रा द्वारा चलाते हैं, परंतु अन्य भाई-बहन, बालक, जो यहाँ पर हैं, वे श्रमभारती के स्थापक "पागल" धीरेन्द्र मजूमदार के स्वप्न को सिद्ध करने के काम में लगे हुए हैं। 'पसीना बहाये बिना रोटी खाना हराम है' इस सूत्र को अपने जीवन द्वारा क्रियान्वित करने की पूरी-पूरी कोशिश श्रमभारती-परिवार कर रहा है, यह अनुभूति किसमें आनंदोर्मि नहीं प्रकटायेगी ?

मैं अतिथि था, इसलिए नियमानुसार सुबह के चार घंटों तक श्रमकार्य में शरीक नहीं हुआ, परंतु आंशिक श्रम मैंने भी किया और रोटी खाने का अल्पांश में हकदार बना। इतना संतोष लेकर मैं खादीग्राम के पासवाले ललमटिया ग्राम में एक छोटी धोती पहने, छाता हाथ में लेकर किसीको साथ में न लेते हुए निकल पड़ा। ललमटिया और ऐसे चारएक दूसरे ग्राम (जिन्हें हम टोला, ढाणी या पाड़ा कहें वैसे ग्राम) ग्रामदानी बने हैं। ललमटिया की कुछ बातें मैंने पहले से सुनी थीं, जान ली थीं।

धान के खेत देखे। एक तालाब के किनारे पाँच-छह ग्रामवासी नहर (अस्थायी) खोदने में लगे थे। मैं उनकी ओर मुड़ा। वे ललमटिया के थे, इसलिए मैंने उनसे संपर्क साधना शुरू किया।

मैं : आज आप बड़ी फजर से ही इस काम में लग गये दीखते हो ?

ग्रामवासी : हाँ बाबूजी ! क्या करें ? चावल बोया है, परंतु भगवान् की कृपा होगी तब ही फसल होगी। इसलिए इस तालाब के पानी का सहारा ले रहे हैं, लेकिन महाराज, इससे क्या होगा ? ऊपर से ईश्वर की दया न हो, तो कुछ काम नहीं बन पायगा। यहाँ तो सूखा पड़ा है। कहिये महाराज ! बारिश होगी या नहीं ?

उनके इस प्रश्न का मैं क्या जवाब देता ? परिस्थिति को ध्यान में रखकर कहा : कल की गरमी को देखते हुए आज बारिश होनी चाहिए। फिर तो अपने नसीब की बात है। परंतु भगवान् मारेगा नहीं, वह बहुत दयालु है। मैंने सुना है कि आप लोगों ने अपने सब खेत विनोबाजी को दे दिये हैं।

ग्रामवासी : हाँ, हाँ, महाराज ! हमने ग्रामराज बना लिया है।

मैं : वह कैसे ?

ग्रामवासी : हमारे टोले में हम ३६ घर हैं। हम सबने अपने-अपने आदमियों का हिसाब लगा लिया है, खेत आपस में बाँट लिये हैं। इस तरह अपने ग्रामराज बनाया है।

मैं : मतलब यह हुआ कि आपने सबने अपने-अपने खेत गाँव के बना दिये, यही बात है न ?

ग्रामवासी : हाँ, महाराज !

मैं : इससे आपको फायदा क्या हुआ ?

ग्रामवासी : जिस-जिस घर में जितने आदमी हों, उतने आदमियों का गुजारा हो सके उतनी जमीन उस घरवाले के पास रहनी चाहिए। जैसा पेट उतनी जमीन, यह हमने कायदा माना है। हमको भाईजी (धीरेनभाई, रवीन्द्रभाई) आकर यह बात समझाते हैं और हमें ये बातें अच्छी लगती हैं। देखो, ये धान के खेत। पहले हम एक बीघे में एक मन चावल बोते थे और रोपनी में एक मन और चावल मजदूरी में चले जाते थे। अब भाईजी ने बताया है कि एक बीघे में सिर्फ पाँच सेर चावल ही बोने से काम चलेगा, और मजदूरी वगैरह का जो खर्चा लगेगा, वह सब मिलकर एक-एक मन चावल ही खर्च होंगे। यह तरीका हमने काम में लाया है। इस तरह भाईजी हमको अच्छा रास्ता दिखाते हैं।

मैं : हाँ, भाईजी आपको सही रास्ते पर ले जा रहे हैं, इसमें कोई शक नहीं। लेकिन, भाई यह बताओ कि इतने छोटे-छोटे खेत ही क्यों रखे हैं ? इस गाँव की सब जमीन गाँव की हो गयी क्या ?

ग्रामवासी : नहीं जी, हमारी जमीन हमने मिला दी है, लेकिन पासवाले गाँव में रहनेवालों ने ग्रामराज नहीं माना है। वे तो अलग रहते हैं।

मैं : तो उनको साथ में ले आओ। इस गाँव में उनकी जमीन कैसे आयी ?

ग्रामवासी : हम अनाड़ी लोग हैं। हमने अपनी जमीन पर रुपया उठाया--करजा किया। वह रकम हमारे बाप-दादा--हम नहीं लौटा पाये। जमीन उनके कब्जे में चली गयी। आज हम अपनी इस जरासी जमीन पर गुजारा करते हैं। यह तो भला करे भगवान् उनका, भाईजी ने यहाँ पर यह सब (खादीग्राम-श्रमभारती का) काम शुरू किया, तब हम भी कमा खाते हैं। और कोई धंधा भी नहीं रहा था। जंगल में से लकड़ी लाने का काम भी बंद है। अब तो हमारे यहाँ अंबर चरखा सिखाया जाता है। हम भी वह चलायेंगे और हमारे कपड़े हमारे गाँव में बनायेंगे ?

मैं : आपको अंबर चरखा पसंद आया ?

ग्रामवासी : हाँ जी, ज्यादा सूत निकलता है। अभी तो औरतें सीखती हैं, हम भी सीख लेंगे। और काम भी क्या होगा ? भाईजी के मकान बनाने का काम कितना चलेगा ? आखिर तो हमें अपना धंधा चलाना होगा। वह तालाब आप देख रहे हो, वह हमने श्रमदान में बनाया है।

मैं : बहुत अच्छा किया।

ग्रामवासी : यह सब ग्रामराज (ग्रामसभा को ग्रामराज कहते हैं) के कारण है।

मैं : क्या आपके ऊपर कुछ करजा भी है क्या?

ग्रामवासी : हाँ जी, किसी पर सौ, किसी पर दो सौ, ऐसा करजा है।

मैं : गाँववालों पर सब मिलकर कितना करजा होगा और वह कैसे चुकाओगे ?

ग्रामवासी : दो-तीन हजार का होगा। हरएक अपना करजा खुद चुकायेगा। भाईजी ने इसमें से भी रास्ता निकाला है। हम उनके वहाँ काम करने जाते हैं, तो वे सात रोज की हमारी मजदूरी में से एक रोज की मजदूरी करजा चुकाने के लिए काट लेते हैं। हम घर में दो आदमी काम पर जाते हैं, तो मर्द का सवा रुपया और औरत के बारह आने, लड़के के छह आने इस हिसाब से रकम कट जाती है। हमारी उम्मीद है कि हम करजदार नहीं रहेंगे।

मैं : लेकिन आइंदा करजा निकालने की जरूरत हुई तो क्या करोगे ?

ग्रामवासी : हमारा ग्रामराज सोचेगा और इंतजाम करेगा या करवायेगा।

मैं : आपके गाँव में कितने भाई पढ़े-लिखे हैं ? आप भी पढ़ोगे या नहीं ?

ग्रामवासी : हमारे यहाँ दो भाई पढ़े हैं, वे हमारे ग्रामराज का काम चलाते हैं। हमारे लड़के-बच्चे पढ़ने लगे हैं। भाईजी ने स्कूल भी खोल दिया है। बहन पढ़ाने आती है। (यह ग्रामपाठशाला एक पेड़ के नीचे ओटे पर श्रमभारती की छाया बहन चलाती हैं, करीबन ५० लड़के-लड़कियाँ भरती हुए हैं। विशेषता यह है कि उनकी माताएँ भी खास ध्यान रखती हैं और पाठशाला को सुव्यवस्थित चलाने में मदद देती हैं। अंबर का काम सिखानेवाली शकुंतला बहन ने कहा कि आज से प्रौढ़ महिलाएँ रात से सीखने का आरंभ करनेवाली हैं--मैं रात को भी यहाँ ही रहूँगी)।

मैं : आप भी पढ़ने लगोगे या नहीं ?

ग्रामवासी : महाराज ! हम पढ़कर क्या करेंगे ? हमें कोई वकील या बाबू थोड़ा ही बनना है ?

मैं : वकील बनने के लिए पढ़ना है ? अब तो वकीलों का काम ही थोड़ा ही क्या रहेगा जब आप अपने फैसले आपस में ही तय करोगे ? वकील लोग तो झगड़े बढ़ाते हैं न ?

ग्रामवासी : हाँ आपका कहना ठीक है। ग्रामराज में तो मामले मामूली होते हैं।

मैं : आप बे पढ़े-लिखे भी तो अपनी अकल से तय करते हैं न ?

ग्रामवासी : हाँजी, इसमें कायदे-कानून की बात ही क्या है ? किसीके खेत में मेरा बैल चला जाय, तो वैसे मामले हम ही सुलझा सकते हैं।

मैं : फिर भी पढ़ना चाहिए। ज्ञान होता है।

ग्रामवासी : हाँ जी, दुनिया की बातें समझ में आती हैं। लेकिन एक बात कहिये महाराज ! हमने यह ग्रामराज किया वह अच्छा किया या बुरा ? हम सुखी होंगे या दुःखी ?

मैं : जो भाई-भाई मिलकर साथ में रहते हैं, मिल-जुलकर काम करते हैं, तो उसमें सुख ही सुख है। भगवान् पर इतबार रखकर एक-दूसरे को मदद करने से सबको फायदा पहुँचेगा। जो लोग आज ग्रामराज में शामिल नहीं हुए, वे भी आपके मुहब्बत के बर्ताव से आपके नजदीक आ जायँगे। गांधी बाबा और विनोबा की बात वे समझ लेंगे और गाँव-गाँव अपना कारोबार दूसरों को नुकसान न पहुँचाते हुए करने लग जायँगे, तब सब जगह सब लोग रामजी की जय बोलेंगे।

---

www.vinoba.in

भूदान-यज्ञ
१३ सितंबर सन् १९५७

* लोकनागरी लिपि

शांती की शक्ती क्यों नहीं बन पा रही है ?

(वीनोबा)

अेक भाअी ने पूछा की त्याग-तपस्या का आपका तत्वग्यान व्यक्तीगत अुन्नती के लीअे तो ठीक है, लेकीन अपना देश, जो की वर्धीष्णु और चारों तरफ से शत्रुओं, से वेष्ठीत है, अुसके लीअे यह तत्वज्ञान कहां तक अुचीत हो सकता है ?

यह सवाल बहुतों के मन में अुठता है। वे समझते हैं, व्यक्ती की अुन्नती के लीअे अेक बात करनी है और देश की अुन्नती के लीअे दूसरी। पर असी के कारण दुर्बलता आयी है। ईंगलैंड-अमेरीका में क्रीस्ती धर्म है। ईसा ने कहा है, "वैर नहीं करना चाहीअे, शत्रु को प्रेम से जीतना चाहीअे। जो अपने हाथ में तलवार लेगा, अुसका नाश अुसीसे होगा"। लेकीन वे आज क्या करते हैं ? क्या वे ढोंगी हैं ? ढोंगी अेकाध मनुष्य हो सकता है, दस हो सकते हैं, पंद्रह हो सकते हैं ? परंतु कुल देश ढोंगी नहीं हो सकता। बात यह है की अुन्होंने अपनी आत्म-वंचना कर रखी है। अुन्होंने मान लीया है की ये चीजें व्यक्तीगत मुक्ती के लीअे ठीक हैं, परंतु देश की मुक्ती के लीअे अेटम बम ही चाहीअे ! ईस तरह अेटम बम और बाअीबल का कॉम्प्रमाअीज अुन्होंने कर लीया है। वे समझते हैं, "वह ईसा की कमांड नहीं है, कॉअुन्सल ऑफ परफेक्शन है।' वास्तव में "न्यू कमांडमेंट मैं देता हूं" अैसा ही ईसा ने कहा है, लेकीन अुन लोगों ने अुसको सलाह के तौर पर मान लीया है। ईस प्रकार अुत्तम धर्म की, अुत्तम नीती की ताकत कम कर दी गयी। यही हींदू धर्म वाले, यही मुसलमान धर्म वाले करते हैं, ईसलीये कुल धर्म बेकार हो गये हैं, नाममात्र के रहे हैं। ईससे समाज का कल्याण नहीं होगा, बल्की वीनाश ही होगा।

आज दुनीया की परीस्थीती अहींसा के लीअे अनुकूल है। आज हींसा तमंचा, लाठी, तलवार तक सीमीत नहीं है, बहुत वीकसीत हुअी है। अगर हमारे मन में अैसी बुद्धी वीकसीत होती है की दुनीया के लोग हमारे शत्रु हैं, तो समझ लीजीअे की वह बुद्धी दुनीया का नाश करने की तैयारी करने वाली साबीत होगी। ईस वास्ते हमको शांती की शक्ती बनानी होगी। शांती केवल रोचक शक्ती नहीं, जीवन में रुची लाने वाली शक्ती नहीं, वह तारक, प्रेरक और रक्षक शक्ती है, अैसा वीश्वास लोगों में पैदा होना चाहीअे। आज हमारी करुणा घर में है, ज्यादा से ज्यादा पड़ोसी तक जाती है, परंतु शत्रु को देखकर घबड़ा जाती है !

* लिपि-संकेत : ि = ी; ी = ॊ, ख = ख, संयुक्ताक्षर हलंत-चिह्न से।

वेतन या भत्ता ?

पत्र :

"भूदानयज्ञ" ता० २८ जून १९५७ पेज ६ पर श्री महावीर सिंह के पत्र के उत्तर में आपका पत्र (लेख) पढ़ा। आपने लिखा है कि संसद के सदस्य जो वेतन लेते हैं, वह वेतन नहीं भत्ता है। मैं आपसे सहमत नहीं हूँ। संसद-सदस्यों को वेतन अर्थात् तनख्वाह लगभग ४००) रु० मासिक मिलता है वह भत्ता नहीं है, याने वे चाहे आवें या घर बैठे रहें, किन्तु काम पर रहने की तनख्वाह यह रकम मिलेगी। इसके अतिरिक्त भत्ता लगभग २१) नित्य या कुछ ऐसी ही रकम नित्य की भत्ता की मिलती है, जब वे लोग हाजिर रहते हैं तब, अनुपस्थिति में भत्ता नहीं। अतएव इस रकम को भत्ता कहा जायगा। बँधा हुआ मासिक तो वेतन (तनख्वाह) ही होना चाहिए। तो, निवेदन है कि यथोचित सुधार छाप दीजिये। व्यर्थ भ्रम लोगों का मिटे। आपका लेख तो प्रामाणिक माना जाता है, इसलिए सही (Correct) बात छपनी चाहिए।

मैं "भूदानयज्ञ" का ग्राहक नहीं। एक मित्र की कृपा से पढ़ने को कभी-कभी पाता हूँ, अभी-अभी पाया, तो निगाह में आया और आपको लिखा।

—दामोदरदास खंडेलवाल

उत्तर :

महानुभाव, मैं लगातार यात्रा में रहता हूँ, इसलिए आपका कृपापत्र काफी देर से मुझे मिला। उसी कारण यह उत्तर लिखने में भी विलंब हुआ। आप क्षमा करें।

वेतन, भत्ता और पारिश्रमिक, ये तीनों शब्द अलग-अलग अर्थों में प्रयुक्त होते हैं। लेकिन इनमें से किसी भी शब्द की निश्चित व्याख्या करना मेरे लिए मुश्किल है। संविधान और वैधानिक संज्ञाओं का मेरा ज्ञान बहुत ही अल्प है, इसलिए आपका सुझाया हुआ संशोधन स्वीकारने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है। आपने इतनी जागरूकता से मेरा ध्यान उस तरफ दिलाया, यह आपकी बड़ी कृपा है, जिसके लिए धन्यवाद ! आप ऐसे जागरूक लोकहित-परायण व्यक्ति में हम "भूदानयज्ञ" पढ़ने की दिलचस्पी नहीं जाग्रत कर सके, यह हमारा दोष है।

एक निवेदन कर देना चाहता हूँ। वेतन या तनख्वाह पानेवाला अक्सर उस संस्था या व्यक्ति का पूरे समय के लिए नौकर माना जाता है। उसे फिर कमाई का दूसरा कोई रोजगार या व्यवसाय करने की आज़ादी नहीं होती। जो वेतन उसे दिया जाता है, वह उसके लिए काफी माना जाता है। जो लोग स्थानीय शासन-संस्थाओं या विधान-सभा तथा संसद के सदस्य होते हैं, उनके लिए ऐसा कोई बंधन नहीं है। वे अपना-अपना व्यवसाय कर सकते हैं। कैद सिर्फ इतनी ही है कि दूसरा कोई सार्वजनिक काम, जिससे मतलब अक्सर सरकारी या अर्धसरकारी नौकरी से होता है, वह पैसे लेकर न करता हो। यह फर्क मेरे मन में था, इसलिए मैंने उस तरह का विवेचन किया। यदि इसके बाद भी आपकी यही राय रहे कि उसे तनख्वाह ही कहनी चाहिए, तो मुझे आपकी बात मानने में कोई उज्र नहीं है। कृपा बनाये रखें।

काशी, ता. १८-७-'५७ —दादा धर्माधिकारी

कानून की व्यर्थता

प्रश्न—जो लोग कानून के विरोध में हैं, वे ही भूदान के अनुकूल हैं। इसका रहस्य क्या है ?

विनोबा—बड़ा ही रहस्य है ! कानून से जमीन ली जायगी, तो गाँव में झगड़े पैदा होंगे। कानून तो तब हो सकेगा जब हवा तैयार होगी। अन्यथा झगड़े ही पैदा होंगे। कानून से भी क्या करेंगे ? सीलिंग बनायेंगे। लोग क्या इतने मंदबुद्धि के हैं कि सरकार की गति मंद है। तब तक उन्होंने आपस में जमीन बाँट ली है। फिर भी कुछ थोड़ी जमीन मिलेगी, तो वह ज्यादा से ज्यादा खराब ही मिलेगी। उसके अलावा कम्पेन्सेशन देना पड़ेगा, इसके बावजूद लिटिगेशन चलते रहेंगे। परंतु बाबा तो प्रेम से माँगता है। बाबा को जमीन भी अच्छी मिलती है। बिलकुल खराब जमीन हो, तो बाबा प्रेम से उसके बदले में दूसरी माँगता है। लोग बदल कर देते भी हैं और बाबा एक कौड़ी भी कम्पेन्सेशन देता नहीं। फिर कुछ बीज, बैल की जरूरत हो, तो उन्हींसे माँगता है। इस वास्ते भूदान से जो बनता है, वह कानून से नहीं हो सकता।

www.vinoba.in

खादी-काम सम्बन्धी नीति का आधार क्या हो?

(सिद्धराज ढड्ढा)

[७-८ जुलाई को काकावाड़ी, वर्धा में सर्व-सेवा-संघ की खादी-ग्रामोद्योग-समिति की सभा हुई थी । उपरोक्त सभा में खादीकाम के आगे के स्वरूप और नीति के संबंध में चर्चा हुई। ग्रामदान और ग्राम-संकल्प के नये संदर्भ में खादीकाम की दिशा क्या हो, यह सवाल मुख्य रूप से सबके सामने था। देश की प्रमुख खादी-संस्थाओं के प्रतिनिधि और खादीबोर्ड के मुख्य-मुख्य व्यक्ति इस सभा में उपस्थित थे। इस सारी चर्चा के बाद यह तय हुआ कि इस संबंध में गहराई से विचार करने के लिए समिति की सभा फिर से जल्दी ही बुलाई जाय, जिसमें अन्य खादी कार्यकर्ताओं को भी निमंत्रित किया जाय । फलस्वरूप ता० १४, १५ सितम्बर को अहमदाबाद में खादी समिति तथा संस्थाओं के कार्यकर्ताओं की सभा होने जा रही है।

इस बीच सर्व-सेवा-संघ के सहमंत्री श्री सिद्धराजजी ढड्ढा श्री विनोबाजी से केरल में मिले । उनके साथ खादीकाम के स्वरूप और आगे की नीति के बारे में चर्चा हुई। वर्धा की बैठक में और विनोबाजी के साथ हुई चर्चाओं के आधार पर खादीकाम की नीति के ऐतिहासिक सिंहावलोकन के साथ काम की आगे की दिशा के बारे में उन्होंने प्रस्तुत नोट लिखा है। यह नोट खादी-कार्यकर्ताओं के लिए और रचनात्मक कामों में दिलचस्पी लेनेवाले व्यक्तियों के लिए उपयोगी तथा मननीय सिद्ध होगा, ऐसी आशा है। —संपादक]

अखिल भारत चर्खा-संघ सन् १९५३ में सर्व-सेवा-संघ में विलीन हुआ। उसके पहले देशभर में खादी का काम चर्खा-संघ के मार्ग-दर्शन में चलता था। कुछ प्रांतों में संघ द्वारा प्रत्यक्ष काम भी होता था। चर्खा-संघ के विलीन होने पर वह जिम्मेवारी सर्व-सेवा-संघ पर आयी। इसी बीच सरकार द्वारा खादी-बोर्ड की स्थापना भी हुई और देशभर में चल रहे व्यापारी ढंग की खादी उत्पत्ति-बिक्री के काम का सम्बन्ध बोर्ड से जुड़ गया। नीति-निर्देश का काम सर्व-सेवा-संघ के जिम्मे ही रहा। खादी-बोर्ड को भी समय-समय पर संघ की सलाह मिलती रही, पर संघ की मुख्य शक्ति इन दिनों भूदान-आन्दोलन में ही लगी।

ग्रामदान के नये संदर्भ में खादीकाम की दिशा

सन् ५५-५६ में भूदान-आन्दोलन व्यापक ग्रामदान तक पहुँच गया। इस नये संदर्भ में खादी-ग्रामोद्योग के काम की पृष्ठभूमि बदल गयी। अम्बर के आविष्कार के कारण भी खादी के काम में उत्साहजनक वातावरण पैदा हुआ। इन सब परिस्थितियों को देखते हुए तथा नये संदर्भ में खादीकाम का मार्ग-दर्शन करने के लिए संघ ने जून ५६ में कांचीपुरम् सर्वोदय-सम्मेलन के अवसर पर एक स्थायी खादी-ग्रामोद्योग समिति का निर्माण किया। अगस्त ५६ में सर्व-सेवा-संघ की प्रबन्ध-समिति ने देश में चल रहे खादी-काम की दिशा स्पष्ट करते हुए यह प्रस्ताव किया कि खादी ग्रामोद्योगों की ओर तीन दृष्टियों से देखा जा सकता है :—

१. गरीबों को राहत पहुँचाना
२. बेरोजगारी कम करने में मदद करना और
३. अहिंसक साम्ययोगी समाज-रचना का आधार

सर्व-सेवा-संघ का खादी-ग्रामोद्योगों के प्रति तीसरा दृष्टिकोण है। राहत और रोजगार की दृष्टि से काम करने वाली संस्थाओं को भी संघ की सलाह और यथासंभव सहकार मिलता रहा है। खादीबोर्ड का काम मुख्यतया रोजगार की दृष्टि से चलता है। लेकिन इस दृष्टि से किये जाने वाले काम भी तात्कालिक और व्यापारिक ढंग से करने के बजाय क्षेत्र-स्वावलम्बन की बुनियाद पर करने से ही वे स्थायी हो सकते हैं और अहिंसक समाज-रचना में मददगार हो सकते हैं, ऐसा दृष्टिकोण प्रबंध-समिति ने जाहिर किया।

ता० १४-१५ जनवरी'५७ को अहमदाबाद में संघ की स्थायी खादी ग्रामोद्योग समिति की सभा हुई, जिसमें खादीकाम के स्वरूप के बारे में विस्तार से चर्चा होकर यह तय हुआ कि "खादीकाम ग्राम-स्वावलम्बन के लक्ष्य को ध्यान में रखकर ग्राम और ग्रामोदय-समितियों के जरिये और ग्रामसंकल्प की पद्धति से किया जाय।" खादी-ग्रामोद्योग का काम करने वाली संस्थाओं का ध्यान इस ओर भी आकर्षित किया गया कि अगर ग्रामविकास की समग्र दृष्टि ध्यान में रखकर काम नहीं किया गया, तो खादी का काम पूर्ण विकास को प्राप्त नहीं होगा, न उसकी बुनियाद पक्की होगी। संस्थाओं से यह सिफारिश भी की गयी कि ग्रामोन्नति के अन्य कामों को भी—मुख्यतः भूदान को—खादीकाम का अंग मानकर अपने-अपने क्षेत्र में वे उन्हें उठा लें।

खादी-ग्रामोद्योग-समिति की तीसरी सभा ८-९ जुलाई '५७ को वर्धा में हुई। उसमें खादीकाम के बारे में विस्तार से चर्चा हुई। अहमदाबाद की सभा में जो यह निर्णय हुआ था कि खादीकाम ग्राम-स्वावलम्बन के लक्ष्य को ध्यान में रखकर ग्राम-संकल्प की पद्धति से चलाना चाहिए, उस पर संस्थाओं की ओर से यह कठिनाई उपस्थित की गयी कि ग्राम-स्वावलम्बन की पद्धति और बोर्ड द्वारा अमुक समय में अमुक टारजेट (लक्ष्य) पूरा करने का आग्रह—इन दोनों का मेल नहीं बैठता। इस प्रकार एक ओर संघ की नीति और दूसरी ओर बोर्ड की योजना के बीच खादी-संस्थाएँ कठिनाई में पड़ जाती हैं। चर्चा में यह स्पष्ट किया गया कि गाँव के लोगों के खुद के संकल्प और अभिक्रम के आधार पर काम चलाने से ही खादी काम का विस्तार हो सकेगा। केवल उत्पत्ति-बिक्री की मौजूदा व्यापारी पद्धति से खादीकाम को व्यापक बनाना मुश्किल होगा। ग्रामसंकल्प की पद्धति से उत्पत्ति के टारजेट अमुक काल मर्यादा में पूरे होते नजर न आये, पर अन्ततोगत्वा मौजूदा टारजेट से भी कहीं अधिक उत्पत्ति इसी पद्धति से शक्य है। गांधीजी ने जिस अहिंसक समाज-रचना की कल्पना हमारे सामने रखी है, उस प्रकार के समाज की स्थापना भी ग्रामसंकल्प की पद्धति से ही संभव है। इस प्रकार सर्व-सेवा-संघ द्वारा निर्देशित खादीकाम की दिशा और खादीबोर्ड की उत्पत्ति-बिक्री की योजना, इन दोनों में वास्तव में विरोध नहीं है।

खादी : डिफेंसमेजर

राष्ट्रीय दृष्टि से एक दूसरा महत्त्व का पहलू भी है, जिसके कारण ग्राम-स्वावलम्बन की पद्धति आवश्यक है। आज किसी क्षण भी युद्ध छिड़ जाने का खतरा बराबर बना हुआ है। युद्ध छिड़ जाने पर गाँवों में रहने वाली अधिकांश जन-संख्या को विपत्ति से और देश के आर्थिक जीवन और योजनाओं को टूटने से बचाना हो, तो ग्राम-स्वावलम्बन आवश्यक है, अर्थात् एक डिफेन्स मेजर के तौर पर वह जरूरी है।

खादी-बोर्ड क्या करे?

खादी-बोर्ड की योजना सरकार की दूसरी पंचवर्षीय योजना का एक अंग है। सरकार की योजना का लक्ष्य उत्पादन बढ़ाने का है और इस प्रकार खादी-बोर्ड का भी लक्ष्य उत्पादन के लक्ष्य से जुड़ जाता है। खादीबोर्ड से सम्बन्धित खादीकाम अभी उत्पत्ति-बिक्री उत्तरोत्तर बढ़ाते जाने के व्यापारी लक्ष्य और पद्धति से चलता रहा है। पर ऊपर बतायी हुई बातों को ध्यान में रखते हुए खादीबोर्ड द्वारा खादीकाम की अपनी नीति में परिवर्तन करना मुश्किल नहीं होना चाहिए। खादीबोर्ड को सरकार के सामने यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि ग्राम-स्वावलम्बन से ही उत्पादन बढ़ाया जा सकेगा और बेरोजगारी कम की जा सकेगी। ग्रामदान और ग्राम-संकल्प की पद्धति का जो अनुभव मिला है, उस पर से हमें हिम्मत के साथ आगे बढ़ना चाहिए।

खादी-संस्थाओं का कर्त्तव्य

खादी-संस्थाओं और कार्यकर्ताओं के लिए भी यह कसौटी का समय है। संस्थाओं के अधिकांश कार्यकर्ता बापूजी की दृष्टि को स्वीकार करके ही खादीकाम में लगे हुए हैं। ग्रामदान और ग्राम-स्वावलम्बन के प्रत्यक्ष अनुभव के पहले खादी की कार्य-पद्धति केवल उत्पत्ति-बिक्री की होना स्वाभाविक था, पर अब ग्राम-संकल्प के जरिये जनशक्ति की संभावनाएँ प्रकट हुई हैं, जब कि कानूनी या सरकारी संरक्षण से खादी-ग्रामोद्योग का काम आगे बढ़ाने की एक मर्यादा है, वहाँ जनशक्ति और जन-संकल्प के द्वारा आगे बढ़ने में ऐसी कोई मर्यादा और रुकावट नहीं आती। इस प्रकार खादीबोर्ड और संस्थाएँ ग्रामदान–ग्रामसंकल्प के नये संदर्भ को ध्यान में रखते हुए दृढ़ निष्ठा के साथ अपनी कार्यपद्धति में परिवर्तन करें, तो उत्पादन का लक्ष्य पूरा करते हुए नयी समाज-रचना के काम में हाथ बढ़ाने का संतोष भी प्राप्त कर सकते हैं।

प्रश्न यह रह जाता है कि संस्थाएँ अपनी कार्य-पद्धति को नयी दिशा में किस प्रकार मोड़ें? सारे काम का एकसाथ परिवर्तन तो संभव नहीं होगा। मौजूदा कार्यकर्ताओं की क्षमता का ध्यान भी रखना होगा। वे अभी तक व्यापारी पद्धति

www.vinoba.in

के काम में लगे रहे हैं। उन्हें भी सर्वोदय-विचार की गहराई में ले जाना होगा और ग्राम-स्वावलम्बन की निष्ठा उनमें जाग्रत करनी होगी। अतः संस्थाओं को अपने काम की दिशा मोड़ने के लिए एक तरफ तो शिविर, अध्ययन-वर्ग आदि के जरिये कार्यकर्ताओं के शिक्षण का व्यवस्थित कार्यक्रम बनाकर उसे अमल में लाना होगा तथा दूसरी तरफ आज जिन गाँवों में-उनका खादीकाम चल रहा है, उनमें से जहाँ ग्रामसंकल्प की संभावना अधिक हो, ऐसे अनुकूल गाँव चुनकर वहाँ ग्रामवासियों में ग्राम-स्वावलम्बन और ग्रामराज का विचार फैलाना होगा तथा उन्हें ग्रामसंकल्प तक ले जाना होगा। इस काम में संस्था के पाँच-सात प्रमुख और निष्ठावान लोगों की एक अलग टुकड़ी बने और वह योजना-पूर्वक इस काम में जुट जाय। इस प्रकार जिन गाँवों को ग्रामसंकल्प के लिए चुना जाय, उनमें मौजूदा खादी-उत्पत्ति के काम को किस प्रकार क्रमशः स्वावलम्बन की पद्धति पर ले जाया जाय, इसका तरीका संस्थाओं को अनुभव से सोच निकालना होगा।

कार्यकर्ताओं का शिक्षण

विनोबाजी ने पिछले दिनों एक से अधिक बार इस बात पर जोर दिया है कि खादी-संस्थाएँ अपने कार्यकर्ताओं को रोज एक घंटा विचारों के अध्ययन के लिए दें। उस समय का पूरा उपयोग हो, इसकी योजना बनायें। रोजाना सूत-कताई का नियम आज अधिकांश खादी-संस्थाओं में है। इन दोनों कामों को जोड़ा जा सकता है। कताई के साथ सामूहिक अध्ययन तथा चर्चा की योजना की जा सकती है।

आज ग्रामदान, ग्रामराज और ग्राम-संकल्प का जो वातावरण बनता जा रहा है, उसके कारण ऐसा समय आया है, जब खादी-संस्थाओं को निष्ठा और योजनापूर्वक इस काम में लग जाना चाहिए। खादी-ग्रामोद्योग के काम को अगर इस तरह जनशक्ति का सहारा हमने नहीं दिया, तो सिर्फ ऊपर के सरकारी संरक्षण से वह ज्यादा दिन नहीं टिक सकेगा। ——

कार्यकर्ताओं और विचारकों के लिए (पिछले अंक का शेष।)

भूदान-आरोहण की समीक्षा

(महावीर प्रसाद केड़िया)

[हमारे माननीय मित्र श्री केड़ियाजी ने भूदान-आरोहण की समीक्षा करते हुए कुछ सवाल भी इस लेख में प्रस्तुत किये हैं। परिस्थिति का अध्ययन करके जैसे उन्होंने अपने विचार प्रस्तुत किये हैं, वैसे ही हमारे अनेक साथी परिस्थिति और आंदोलन का अध्ययन करते रहते हैं। जो ऐसा अध्ययन करते हैं, वे श्री केड़ियाजी के द्वारा उठाये गये प्रश्नों पर अपने विचार प्रकट करें, ऐसी हम प्रार्थना करते हैं। सब बातों का जवाब संपादक ही दें, यह पद्धति उचित नहीं है। इस पर दूसरे लोग भी विचार कर सकते हैं और करते हैं, यह इसी लेख पर से पता चलता है। सर्वोदय का यह प्रमुख अंग है कि स्वाध्याय में सब मदद कर। इसलिए विचारकों को हम, स्वाध्याय की दृष्टि से, ऐसे विषयों और प्रश्नों पर चर्चा करने के लिए आमंत्रित करते हैं। —संपादक]

मुझे ऐसा लगता है कि जनता के सामने हम इतने ऊँचे स्तर के विचार रखते हैं कि विचारों को मूर्तरूप देने की बात हवा में ही रह जाती है। इतना ही नहीं, व्यावहारिक क्षेत्र में कुछ उलटी बातें भी हम करते रहते हैं। ग्रामदान की ही बात लीजिये। जाहिर है कि ग्रामदान की योजना में कुल जमीन का जब पुनर्वितरण होगा, तब गाँव की ७५ प्रतिशत जनता को स्पष्ट आर्थिक लाभ होगा। सारे भारत का जोत का चित्र (Census of land holding) तो उपलब्ध नहीं है परन्तु पश्चिम बंगाल के चित्र से स्पष्ट है कि ७० प्रतिशत जोत ५ एकड़ से कम है तथा यहाँ भूमिहीन मजदूरों की संख्या प्रायः ४३ प्रतिशत है। कृषिजीवी जनसंख्या का कुल ८३ प्रतिशत भाग या तो भूमिहीन है या पाँच एकड़ से कम जमीन रखता है। पश्चिम बंगाल की कुल जमीन का पुनर्वितरण हो, तो प्रत्येक परिवार को पाँच एकड़ जमीन दी जा सकती है। यहाँ कुल आबाद तथा आबाद करने लायक जमीन १ करोड़ ४७ लाख एकड़ है तथा कृषिजीवी परिवारों की संख्या करीब २८ लाख है। इस तरह ग्रामदान के द्वारा यहाँ की ८३ प्रतिशत जनता को प्रत्यक्ष लाभ मिलने वाला है। ग्रामदान में यदि गरीब जनता सामने आती है, तो उनको यह प्रत्यक्ष लाभ होने वाला है। इस बात को हमें जनता के सामने निःसंकोच तथा स्पष्ट रूपसे रखना चाहिए। परन्तु हमारे वक्तव्यों में इन तथ्यों का समावेश नहीं रहता। अतः जनता को हम विशेष आकर्षित नहीं कर पाते। होता क्या है कि यह स्पष्ट चित्र तो हम रखते नहीं, फिर ग्रामीण जनता को कार्यकर्ता कहते हैं, 'आपका कर्ज माफ करा देंगे, आपकी जमीन में सोना उगा देंगे', आदि अनेक अनर्गल बातें करते हैं; और फिर कुछ कर नहीं पाते, तो जनता में निराशा पैदा होती है। प्रत्येक जिले के कार्यकर्ता सारे तथ्यों का यथाशक्य संग्रह करें तथा जनता के सामने रखें, यह अत्यावश्यक है। भूमि-समस्या के समाधान के लिए थोड़ा कानून का सहारा भी लेने में मुझे कोई दोष नहीं दीखता। यह मानना पड़ेगा कि आज की परिस्थिति में कानून से कुछ नहीं हो सकेगा। परन्तु यदि ग्रामीण जनता में चेतना पैदा की जा सके, तो कानून बनाने वालों के ऊपर उसका असर पड़े बिना भी नहीं रह सकता है। आज राजनैतिक पक्षों के ऊपर उचित कानून बनाने क लिए कोई बाध्यतामूलक परिस्थिति हम पैदा नहीं कर रहे हैं। बल्कि एक तरह से उनका बचाव ही हो रहा है, जब हम यह कहते हैं कि कानून से कुछ नहीं हो सकता! आज के कानून और न्यायोचित कानून में हमें फरक करना पड़ेगा। मुझे नहीं लगता कि ग्रामदान की हमारी कल्पना कानून के ढाँचे में हम नहीं ढाल सकते। इस विषय पर थोड़ा स्पष्ट चिंतन हमको करना चाहिए। अक्सर यह कहा जाता है कि बहुमत अपने विरुद्ध कानून कभी नहीं बना सकता। हमारे नेतृस्थानीय व्यक्ति भी यह कहते हैं। परन्तु बहुमत का हित तो ग्रामदान के पक्ष में है। सारे देश की कृषिजीवी जनता के कम-से-कम ७५ प्रतिशत भाग का हित ग्रामदान द्वारा सध सकता है। फिर देश का बहुमत तो गाँवों में ही रहता है। ऐसी अवस्था में आवश्यकता है, ग्रामीण जनता को जाग्रत करने की। वे आज सोये हुए हैं, इसी कारण सभी राजनैतिक पक्ष ग्रामीण जनता के हितों के साथ खिलवाड़ करने की हिम्मत कर सकते हैं। क्या हमारे कार्यक्रम का एक मुख्य अंश ऐसी जन-जाग्रति नहीं होना चाहिए? यह सत्य है कि कानून के द्वारा पूरी सफलता नहीं मिल सकती। परन्तु ग्रामदान के मार्ग में बड़े भूमिवानों की जो बड़ी बाधा है, वह कानून के बिना भी कैसे दूर हो सकती है? हम यह तो कहते ही हैं कि कानून तो मुहर लगा सकता है, क्रांति तो जनता को करनी होगी। यही बात मैंने ऊपर कही है। ग्रामीण जनता जाग्रत हो, यह प्रयास हमें करना है। फिर इस जागृति के फलस्वरूप कानून की मुहर लगानी है। आज की परिस्थिति में गांधीजी के जमाने का सत्याग्रह नहीं चलेगा, यह समझ में आता है, परन्तु लोगों का मत-परिवर्तन करके ग्रामदान के अनुकूल कानून बनाने की बाध्यतामूलक परिस्थिति पैदा हो, इसमें कहाँ अड़चन आती है?

अब थोड़ा विवेचन हमें ग्राम-निर्माण की समस्या तथा औद्योगिक समस्याओं के बारे में भी करना होगा। हमें यह नहीं समझना चाहिए कि सिर्फ ग्रामदान से ही सारी समस्याओं का समाधान स्वतः हो जायगा। ग्राम-निर्माण के काम में मुख्य समस्या बाहरी मदद तथा आंतरिक प्रयास की है। हमारी ग्रामीण जनता सदियों के शोषण तथा उत्पीड़न के कारण इतनी भाग्यवादी और आलसी बन गयी है कि उनमें अब कोई अभिक्रम की शक्ति नहीं रह गयी है। ऊपर से कुछ टपक पड़े, ऐसी वृत्ति सारे देश की है। इस आलस्य के वातावरण को कैसे दूर किया जाय? बाहरी मदद अवश्य चाहिए, परन्तु बाहरी मदद की बात आते ही आंतरिक प्रयास खतम होने लगता है। यह प्रश्न हमारे सामने है। कोई ठोस सुझाव तो मेरे सामने नहीं है, परन्तु समस्या पर चिंतन की तीव्र आवश्यकता के बारे में ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ।

औद्योगिक समस्याओं को लीजिये। वांछनीय है या नहीं, कहा नहीं जा सकता, परंतु विश्व की वर्तमान परिस्थिति में कोई देश औद्योगिक विकास (प्रचलित अर्थ में) न करे, यह सम्भव नहीं दीखता। पर इन समस्याओं के बारे में हमारा चिंतन बड़ा अधूरा है। शहरी जनता में हमें प्रवेश करना हो, तो इस विषय पर चिंतन करना होगा तथा शहरों के कार्यक्रम में इसका समावेश करना होगा। यह ठीक है कि भूमि-समस्या बड़ी समस्या है, परन्तु फिर शहरवासी पूछते हैं कि हमारा उसमें क्या काम! तो शहरों की अपनी समस्याएँ हैं। हम उनके बारे में क्या सोचते हैं? औद्योगिक क्षेत्र का हमारा क्या चित्र है? ये प्रश्न भी विचारणीय हैं।

प्रस्तुत लेख में मैंने केवल सर्वोदय-प्रेमी जनता का ध्यान कुछ प्रत्यक्ष समस्याओं की ओर खींचने का प्रयास किया है। मेरा निवेदन है कि हमलोग इन प्रश्नों पर कुछ सहचिंतन करें।

ग्राम-निर्माण की समस्याओं का तो विशेष अनुभव मुझे नहीं है, परन्तु औद्योगिक और नागरिक समस्याओं का थोड़ा बहुत अनुभव है तथा इस विषय पर फिर कभी लिखने का प्रयत्न करूँगा। —— (समाप्त)

www.vinoba.in

अमृत-परमाणुओं का तरीका

(विनोबा)

अखबारों में छपा है कि कश्मीर के तालाब की कुल मछलियाँ अणुबम की रेडियो-ऐक्टिव हवा के कारण मर गयीं! बहुत दूर बमों का निरीक्षण हो रहा है, फिर भी उस विष का असर इस प्रकार फैल रहा है। ऐसा ढेर का ढेर विष फैलने का काम उधर हो रहा है, पर इधर यहाँ की आश्रम-लाइब्रेरी में हमने देखा कि 'राम नाम' लिखे हुए काग़ज के ढेर-के-ढेर हिफाजत से रखे हुए हैं। बचपन में हम बड़ोदा में हर शनिवार को रामनाम लिखकर हनुमानजी को चिपकाया करते थे। वह बच्चों का खेल था। यहाँ बड़े भी वैसा ही कर रहे हैं और लोहे के बक्स में उन्हें सुरक्षित भी रखते हैं।

इसका परिणाम यह होगा कि दुनिया में सुन्दर अमृत-परमाणु फैल जायेंगे। उस विष से मछलियाँ मरीं। यहाँ के इन अमृत-बिन्दुओं से अमरीका भी जी जायगा। यही हिन्दुस्तान का तरीका है। चीनी यात्री लिन युटांग ने लिखा कि "हिन्दुस्तान गॉड इन्टाक्सिकेटेड् लैण्ड (ईश्वरमय देश) है।" उधर बमों का संग्रह, इधर रामनाम का! वैसे तो एक ऐटम बम से ही ये कागज, अलमीरा और लिखनेवाला, सब खतम हो जायँगे! लेकिन श्रद्धा कहती है, इसमें ताकत है। उसी ताकत ने तो भारत को बचाया है! अनेक आक्रमणों के बावजूद भारत की संस्कृति अखंड ही रही और दूसरी संस्कृतियाँ समाप्त हुईं। यहाँ के लोगों का यह पागलपन देखकर हमको बड़ी खुशी हुई। यही ताकत भूदान के लिए मददगार हो सकती है। हरएक के मन का बचाव रामनाम करता है। लेकिन हाँ, कुछ पक्षपात भी होता है। हनुमान, भरत जैसों का ज्यादा बचाव होता है। शंकराचार्य ने कहा—"परमेश्वर अग्निवत् समत्वयुक्त है। जो उसके नजदीक रहेगा, उसको गरमी पहुँचेगी, दूरवाले को नहीं।" तो यह दोष अग्नि का नहीं, नजदीक-दूर रहने वाले का है। अग्नि तो निष्पक्ष है। इसी तरह दुनिया के सब लोग रामनाम से आशीर्वाद प्राप्त कर सकते हैं।

ग्रामदान न सिर्फ विश्वशान्ति के लिए वोट है, बल्कि उससे भलाई की रेड़ियो-ऐक्टिविटी सारी दुनिया में फैलती है। साथ ही इस परमाणु को रामनाम के जप का बल भी मिलता है, तो वह 'रामबाण' ही बन जाता है।

वेदों ने कहा है, हे इन्द्र! तुम और हम जुड़ जायँ! यहाँ परमेश्वर याने इन्द्र और इन्द्र याने इदं द्रष्टा। भक्त परमेश्वर से कह रहा है, 'तेरी और मेरी जोड़ी बन जाय, तो महान् कार्य होगा। यह भक्ति के साथ कर्म का योग है।' कर्मयोग इतना नम्र होना चाहिए कि वह भक्ति की शरण में जाकर उसका आश्रय ले और भक्ति को इतना वात्सल्य होना चाहिए कि वह कर्मयोग को पोषण दे। भक्ति माता है, कर्मयोग पुत्र। माता पुत्र के द्वारा पराक्रम कराकर उसको पोषण देती है। यही गीता में कृष्ण और अर्जुन के रूप में दीख पड़ता है।

ऐसे पवित्र स्थान से हम इसी तरह भक्ति और कर्म के योग की अपेक्षा रखते हैं।*

(काननवाढ़, कण्णनूर, १७-८-'५७)

*दक्षिण के रामदास स्वामी के आनन्दाश्रम में किया हुआ प्रवचन। यह काननगढ़ गाँव से दो मील दूरी पर है। यहाँ अखंड रामस्मरण चलता है और आध्यात्मिक प्रेरणा और मनः शान्ति के लिए दूर-दूर से साधक यहाँ आते हैं।

अल्लाह के खिलौने!

मुझे कई बार खयाल आता है कि अल्ला मियाँ को जरा हँसने का दिल हुआ, तो एक विश्वमोहक हास्य के साथ उसने इन्सान को पैदा कर दिया! वल्लाह, हम लोग कितने मजे के हैं! अगर हम दिनभर अपने को ही जरा ध्यान से देखते रहें, तो हँसते ही रहें; हमें चलत्-चित्रों, नाटकों, भोजनालयों, नृत्यमण्डलों में जाने की जरूरत ही न पड़े और कलाकार बेचारे भूखों मर जायँ। कई बार अपनी ही, किसी आवेश में आकर कह दी हुई बात पर, मैं तो घंटों, दिनों—अरे बरसों—हँसती रही हूँ! मसलन एक मौका याद आता है कि जब मैं किसीसे खफा होकर बाघन की तरह चिंघाड़ उठी! मेरे संवादी ने नरमी से कहा, 'पर आप इतनी खफा क्यों हो रही हैं?' मैं आपे से बाहर होकर और चिल्लाई, "मैं बिलकुल खफा नहीं हूँ। कौन कहता है, मैं खफा हूँ? तुम क्या बेवकूफी की बात कर रहे हो!!"

वल्लाह क्या तमाशा है!

—रैहाना तैय्यबजी

साम्ययोग के पंछी

(सुरेश राम भाई)

"जागिये रघुनाथ कुँवर, पंछी बन बोले।" हम आपके अन्दर के राम को जगाने आये हैं। वह है मौजूद, मगर सो रहा है। आपने ऊपर से कई रजाइयाँ ओढ़ रखी हैं—धन-धरती की मालकियत की रजाई, श्रम, बुद्धि की मालकियत की रजाई। ये रजाइयाँ हटाइये। जाग जाइये। हम साम्ययोग के पंछी, सत्युग के पंछी हैं। सत्युग आ रहा है। उसके स्वागत को तैयार हो जाइये।" अपनी मधुर, भावपूर्ण और तेजस्वी भाषा में भू-क्रान्ति का अनोखा सन्देश, श्री श्रीकान्तजी आपटे ने इलाहाबाद जिले और शहर की जनता के सन्मुख रखा। अपने अखिल भारत पदयात्री दल के साथ, वे सात दिन तक—पाँच अगस्त से ग्यारह अगस्त तक—इलाहाबाद जिले में घूमे।

इस दल में आपटे गुरुजी सहित नौ सदस्य हैं। दल के संगठक हैं—केरल-निवासी श्री चेरियन् थॉमस। यह दल २ फरवरी १९५६ को कन्याकुमारी से निकला था। वहाँ से केरल, तमिलनाड़, आँध्र, मैसूर, महाराष्ट्र, बंबई, गुजरात, राजस्थान, पंजाब, दिल्ली होता हुआ उत्तर प्रदेश में आ कर गया। कानपुर-फतहपुर की तरफ से आते हुए पाँच अगस्त को इन यात्री-बंधुओं ने इलाहाबाद जिले में प्रवेश किया था। अब मध्यप्रदेश रीवाँ आदि होकर आगामी दूसरी अक्तूबर, गांधी जयन्ती को सेवाग्राम पहुँचकर यात्रा की पूर्णाहुति करेंगे।

सात दिन तक साम्ययोग के इन पंछियों के सत्संग का हमें सौभाग्य मिला। शाम की आम सभा में रोज गुरुजी का व्याख्यान होता था। वे बहुत सुन्दर और मौलिक ढंग से सर्वोदय तथा भूदान का विचार जनता-जनार्दन के आगे पेश करते थे। ककोढ़ा में उन्होंने कहा कि "आज अपना राज्य आया है, स्वराज्य नहीं। स्वराज्य तभी होगा, जब हर कोई महसूस करेगा कि यह मेरा राज्य है।

"शरीर में वायु-पित्त-कफ की समानता होने पर मनुष्य स्वस्थ रहता है। इन तीनों का संतुलन बिगड़ने पर असमानता आ जाती है। असमानता का ही नाम रोग है। इसी तरह समाज में सबकी मन-दुरुस्ती, धन-दुरुस्ती और तन-दुरुस्ती की समानता रहने की जरूरत है। आज समाज को त्रिदोष लग गया है और यह असमानता जाती रही है। भूदान-यज्ञ इस त्रिदोष का सर्वोत्तम इलाज है।"

अगले दिन बजहा में आपटे गुरुजी ने बताया कि "कलियुग वह है, जिसमें कन्या, गौ और भूमि की खरीद-बिक्री होती हो। जहाँ इन तीनों की बिक्री नहीं, वह सत्युग। अब सत्युग आने वाला है। नया अवतार होने जा रहा है। उसका नाम है, निष्कलंकी अवतार। यह अवतार ऊँच-नीच के, जात-पात के, गरीब-अमीर के कलंक को मिटाकर समाज में न्याय और साम्ययोग की स्थापना करेगा।"

नौ अगस्त की ऐतिहासिक तारीख को यात्रीदल का पड़ाव इलाहाबाद शहर में था। कार्यकर्ता-सभा में गुरुजी बोले: "हम सदा याद रखें कि हम 'कार्यकर्ता'-जमायत है, 'कार्य-करवाता' नहीं! इसलिए हम जितना तपेंगे, उतना ही समाज उज्ज्वल बनेगा! कार्यकर्ता की कसौटी यह है कि उसका घनत्व कितना खत्म हुआ। उसकी आर्थिक समृद्धि, उसका अंधकार, उसका क्रोध तीनों दिन-दिन घटना चाहिए। भूदान-यज्ञ तो धरती का कार्यक्रम है और धरती में वही चीज जाती है, जो द्रव्य-रूप बन जाती है। द्रव्य यानी अपनी हस्ती का पिघल जाना।"

तीसरे पहर नैनी कृषि-महाविद्यालय में उन्होंने कहा: "इस देश में नारा तो 'सत्यमेव जयते' का लगाया जाता है, पर हम चाहते हैं, 'पक्षमेव जयते'। पक्षों से भेद-भाव और मनोमालिन्य बढ़ता है। अब जब राजशाही के बजाय लोकशाही चलती है, तो 'राजनीति' के बजाय 'लोकनीति' की स्थापना होनी चाहिए। यह सब काम जनता को खुद ही करना है।"

फिर गुरुजी ने अपने खेती-सम्बन्धी प्रयोगों पर रोशनी डाली। **बताया कि "रेशनिंग शुरू होने पर मैंने संकल्प किया कि कन्ट्रोल का अनाज न खाकर, खुद पैदा करूँगा; और पौन बीघा जमीन पर काम शुरू किया। सारी जमीन को एक फुट गहराई तक हाथ से खोदकर बदल दिया और कूड़ा-कचरा, राख, पतझड़, मैला और बकरी की मेंगनी की खाद बनायी। इसमें अनाज, साग-भाजी और कपास पैदा की, जिससे निजी खर्च के लिए गल्ला और रूई मिल गयी। ऊपर से**

www.vinoba.in

चार सौ रुपये वार्षिक की बचत भी ! सार यह है कि ऋषि-खेती द्वारा छोटे-छोटे गाटों में काफी उत्पादन किया जा सकता है और अन्न-समस्या के भूत को देश से सहज भगाया जा सकता है।"

शाम को आर्यसमाज मन्दिर (चौक) में सार्वजनिक सभा हुई। इसकी अध्यक्षता श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह, राजा मांडा ने की। वहाँ अपने प्रवचन में गुरुजी ने कहा कि "भूदानयज्ञ आमूलाग्र परिवर्तन का, राज्य को स्वराज्य में बदलने का कार्यक्रम है। इसमें साम, दाम, दंड, भेद—चारों का उपयोग किया जाता है। साम माने समझाना, दाम माने दान माँगना, भेद माने जहाँ भी सज्जन मिलें, उन्हें खींचना और दंड माने गांधीजी की लाठी, शंकराचार्य का धर्म-दण्ड यानी आत्मक्लेश। भूदान-यज्ञ का झंडा ऐसा नहीं है, जिसमें 'डंडा' हो। हमें तो सूर्यनारायण का 'झंडा' चाहिए, जो सुबह स्वयं फहराता और शाम को उतर जाता है।

"इसकी सफलता के लिए सुबुद्धि चाहिए, सुमति चाहिए। लेकिन आजकल वोट लिये जाते हैं और बहुमति बनाम लघुमति की टक्कर चलती है। मगर रामचन्द्रजी ने तो वोट नहीं लिये कि बन जाऊँ या नहीं ! अगर वोट लेते, तो बहुमति कहती कि न जाइये ! लेकिन उन्होंने बहुमति की बजाय सुमति का आसरा लिया। इसी वास्ते तुलसीदासजी कहते हैं कि "जहाँ सुमति तहँ सम्पति नाना, जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना।" सुमति फैलाने का ही काम भूदान-यज्ञ करता है। इसलिए नारद बनकर भूदानयज्ञ सबके पास जाता है–चाहे कोई देव हो या दानव या मानव– और कहता है कि नारायण नाम सत्य है, बाकी सब मिथ्या है। हम नारायण का, परब्रह्म का दर्शन जनता में करते हैं।"

आखिरी पड़ाव हंडिया में था। वहाँ पर आपटेजी बोले कि "लोकनीति-रूपी कृष्ण का नया अवतार हो रहा है। उसे खत्म करने के लिए राजनीति पूतना के जैसा घात लगाये बैठी है। मगर पूतना कौन ? जिसके पूत नहीं हो—यानी बाँझ। स्तनों में दूध न होने के कारण वह जहर लगाकर गयी थी, ताकि कृष्ण जीवित न रह पायें। लेकिन कृष्ण उस विष को पी गये और पूतना-वध करके जगत् का उद्धार किया। इसी तरह राजनीति-रूपी पूतना के दो स्तन हैं—शासन और शोषण। सर्वोदय इस दुहरे विष को पीकर शोषण, शासन-मुक्त समाज बनायेगा।"

इन पंछियों का बड़ा उपकार है, जिन्होंने सात दिन हमारे बीच रैन-बसेरा किया !

बिहार-प्रादेशिक सर्वोदय-सम्मेलन की चर्चा का सार

ग्रामदान के विचार का हर जिले में व्यापक प्रचार किया जाय और जिले के चुने हुए क्षेत्रों में भी उसका गहरा प्रचार हो। इसके लिए पद-यात्रा टोलियाँ निकालें।

भूमि के आंशिक दान के दानपत्र इकट्ठा करने में शक्ति न लगायें। यदि कोई व्यक्ति सहज ही अधिकांश दान देना चाहें, तो उनके दान की जमीन का हो सके तो उसी समय बँटवारा करवा देना अथवा बाद में जल्द से जल्द वितरण करवा देना।

भूदान में प्राप्त जो जमीन अब तक बाँटी नहीं जा सकी है, उसका वितरण जल्द से जल्द कर देना, अथवा जो जमीन वितरण के लायक नहीं है, उसका ब्यौरा तैयार कर लेना। ऐसा होने से ग्रामदान के काम में सहायता मिलेगी और इसके लिए अनुकूल हवा तैयार होगी।

भूदान-कार्यकर्ता भूमि के सम्बन्ध में अपने स्वामित्व-विसर्जन का संकल्प करें और अपने गाँव के लोगों को इसकी जानकारी अच्छी तरह से करा दें। गाँव के निवासी पर्याप्त संख्या में जब इसी तरह अपना स्वामित्व-विसर्जन करके ग्रामदान के लिए तैयार हो जायँ, तो इस प्रकार की सारी जमीन का पुनर्वितरण करा देना चाहिए अथवा गाँव-समाज ग्रामदान के विचार के अनुसार इस जमीन के सम्बन्ध में जैसी व्यवस्था करना चाहे, वैसी व्यवस्था करवा देना चाहिए। (सम्मेलन के अवसर पर ही ७५ कार्यकर्ताओं ने अपने स्वामित्व-विसर्जन की घोषणा की।)

खादी-ग्रामोद्योग विकेन्द्रित समाज-व्यवस्था का प्रतीक और आधार है। फिर भी अनिवार्य ऐतिहासिक कारणों से खादी-कार्य को जितना विकेन्द्रित होना चाहिए था, उतना विकेन्द्रित अभी नहीं बन सका है। अतः इस कार्य को अब पूरी तरह से विकेन्द्रित करना है। बिहार खादी-ग्रामोद्योग-संघ ने इस दिशा में आवश्यक कदम उठाया है। बिहार खादी-ग्रामोद्योग-संघ के इस सराहनीय प्रयास में सभी रचनात्मक कार्यकर्ताओं को पूरा सहयोग देना चाहिए।

नये समाज के निर्माण में नयी तालीम का अत्यन्त महत्त्व का स्थान है। किन्तु नये समाज के निर्माण के लिए प्रयत्न करने वाले व्यक्तियों का समुचित ध्यान नयी तालीम के कार्य और विचार की ओर नहीं गया है। अतः रचनात्मक कार्यकर्ताओं को नयी तालीम की ओर भी आवश्यक ध्यान देना चाहिए।

सत्याग्रही लोकसेवक के निष्ठा-पत्र में चिन्तन-सर्वस्व की बात कही गयी है। इससे यह खयाल अनेक व्यक्तियों का बन गया है कि सत्याग्रही लोकसेवक भूदान-कार्यों के सिवा किसी दूसरे काम या संस्था का दायित्व नहीं उठा सकता। परिणाम यह हुआ है कि कोई व्यक्ति, जो सत्याग्रही लोकसेवक होने के हर तरह से योग्य हैं, किन्तु जिनके ऊपर किसी अन्य संस्था का दायित्व अनिवार्यतः आ गया है और वह काम भूदान के लिए सहायक भी है, वे केवल इस कारणवश सत्याग्रही लोकसेवक होने के अयोग्य अपने को समझ रहे हैं कि उन पर दूसरी संस्था का भी थोड़ा दायित्व है। वास्तव में ऐसे दायित्व, जो भूदान-कार्य में सहायक ही हैं अथवा भूदान-मूलक किसी कार्यक्रम को पूरा करने के लिए उठाये गये हैं, चिंतन-सर्वस्व की शर्त के विरुद्ध नहीं पड़ते हैं। यदि उन्हें इस बात का संतोष हो कि वह दूसरा कार्य भूदान के उद्देश्य के लिए ही है, तो केवल उस कार्य का कुछ दायित्व उन पर होने के कारण भूदान के लिए उनका चिन्तन-सर्वस्व खंडित हुआ, ऐसा नहीं कहा जा सकता। किन्तु इसका खयाल रखना है कि इस भाव को कहीं इस तरह न खींचा जाय कि अर्थ का अनर्थ हो जाय और वास्तव में चिन्तन-सर्वस्व के विचार के खिलाफ वह पड़े।

—श्यामसुन्दर प्रसाद

कर्नाटक-प्रवेश

(महादेवी)

दो रोज से केरलीय बंधुओं भगिनियों के दिल में कुछ भारीपन महसूस हो रहा था। रोज के मुआफिक बाबा "रमारमण गोविन्दो हरि" कहते हुए आगे बढ़े। किसी का भी दिल और पैर पीछे हटता नहीं था। सैकड़ों लोग साथ हो लिये। करीब तीन मील दूरी पर बाबा ने एक नदी पार की। यही नदी केरल और कर्नाटक की सीमा है। कर्नाटक के सैकड़ों लोग फल, फूल, आरती और विविध मंगल वाद्यों के साथ स्वागत के लिए खड़े थे। नदी-किनारे बिदाई की और आगतों के स्वागत की मीटिंग हुई। केरल के वृद्ध वीर पुरुष केलप्पनजी का बिदाई भाषण हुआ। उनका गला रुँध जाता था। वे पहले से ही बाबा से कह रहे थे: "बाबा फिर वापिस आवें, हमको बल दें।" इस आशाकुल मृदु वाणी से उन्होंने केरल की तरफ से बिदाई दी।

इधर कर्नाटक बंधुओं ने हृदयपूर्वक स्वागत किया। उन्होंने कहा: "विनोबाजी, 'कर्नाटक हनुमान का प्रदेश है और शंकर, रामानुज, मध्व और बसवेश्वर आदि को त्याग सिखाने वाला स्फूर्ति, देने वाला यह प्रदेश है। यह कर्नाटक जनहित की शांतिमय क्रांति के समय पीछे नहीं रहेगा। यहीं पर भूदान-यज्ञ की पूर्णाहुति होनी चाहिए' ऐसा जो आपका उद्‌गार है, उसको पूरा करने के लिए हम कर्नाटक के सब लोग एकमत से जुट जायेंगे !" इस भाषण के बाद उन्होंने चौबीस ग्रामदान उपहार में दिये। बाबा ने आशा प्रगट की: **"मोहरूपी रावण को नाश करके पूर्णरूप से शांति-क्रांति की पूर्णाहुति करने के लिए इस प्रदेश में कई हनुमान जुट जायेंगे।**

कर्नाटक-बंधुओं को विशेषतः भूदान-कार्यकर्ताओं को बाबा के आगमन से काफी बल-प्राप्ति का आनन्द होता था। संतागमन की मंगल वेला में 'असतो मा सद्‌गमय-तमसो मा ज्योतिर्गमय' ओ।

केरल में काजू की विपुलता है। लेकिन लोग काजू खा नहीं सकते, क्योंकि वह बेचने की चीज बन गयी है। वह विदेश में भी जाता है। विनोबा ने बात करते हुए कहा, "काजू अपने घर बाग में पैदा हुआ, ऐसी पौष्टिक वस्तु को केरल के लोग खाते नहीं। उसको बेचकर पैसा लाते हैं। अमृत बेचकर जहर लाते हैं। जितना खा सकते हैं, खायें, बाकी बेचें।"

केरल के लोगों की ओर नजर डालते हुए बाबा बोले: 'अगर केरल के लोग बुद्धिवान् हों, तो उन्हें ग्रामदान पर जोर देना चाहिए। उसीसे प्रेम बना रहेगा और वे सुखी रहेंगे। दूसरी बात, उन्हें हिन्दी सीख लेनी चाहिए, क्योंकि यहाँ जगह की कमी है और लोग ज्यादा हैं। इसलिए इन लोगों को बाहर जाना ही पड़ेगा।

---

www.vinoba.in

ग्रामदान-क्रान्ति और हरिजन भाइयों का पुरुषार्थ

(दिवाकर हरिदास)

"अगर जमीन की मालिकी छोड़ देंगे, तो क्या वह हमारे हाथों से खिसक जायगी ?" "फिर जमीन की काश्त कौन करेगा ?" "ग्रामदान हो जाने पर इस गाँव में क्या किया जायगा ?"

रात को ९ बजे एक छोटे से देहात में ग्रामदान-सभा चल रही थी और कार्यकर्ताओं से विचार सुनने के बाद लोगों ने ऊपर लिखे प्रश्नों की झड़ी लगा दी थी। बड़ी रात तक बहस जारी रही और आखिर बारह बजे कार्यकर्ता ने सबसे कहा, "भाइयो, यह विचार आपको ठीक जँचता हो, तो कल या परसों ग्रामदान-पत्र पर दस्तखत या अँगूठे की निशानी कर दीजिये।"

"कल या परसों क्यों ? यह काम अभी पूरा करना होगा।" एक भाई कह उठे।

गाँव के अगुआ मौन बैठे थे। अपना हक छोड़ने में उन्हें हिचकिचाहट हो रही थी, पर जनसाधारण ही, जो प्रायः चुपचाप रहते हैं, आज मुखरित हो उठे थे।

"लेकिन कई लोग तो आये भी नहीं हैं। वे सो गये हैं। यह काम अभी कैसे पूरा हो सकेगा ?"

"क्यों नहीं ? उन्हें जगाकर बुला ले आयेंगे।" लोगों का जोश उमड़ रहा था।

३१ जुलाई '५७ की रात की यह घटना है। कर्नाटक के बेलगाँव जिले के खानापुर तहसील में 'करीकट्टी' और 'सुरपुर' नाम के दो गाँव हाल ही में बसे हुए हैं। सात ही बरस तो हुए। अपने गाँव में इज्जत से बाल-बच्चों के पेट में दो कौर रूखी-सूखी रोटियों के टुकड़े डालना जब मुश्किल हो गया, तब कई हरिजन भाइयों ने यहाँ आकर पनाह ली। सरकार की तरफ से काश्त करने के लिए उन्हें थोड़ी जमीन भी मिल गयी। लेकिन बरसों से बेकार पड़ी हुई जो जमीन थी, उस पर जंगली पेड़-पौधे, कँटीली झाड़ियाँ आदि सब उग आयी थीं। रहने के लिए भी सुविधा नहीं थी। पीने का पानी भी दूर से लाना पड़ता था। ऐसी हालत में पचीसों कुटुंब आ पहुँचे। पेड़ के नीचे डेरा डाल दिया गया। खाना वहीं हाँड़ी में पकता था। आराम भी वहीं। दिनभर जमीन साफ करने का काम चलता। बीच में कभी-कभी दूसरों के खेत पर मेहनत-मजदूरी करके थोड़ा-सा कमा लेते और फिर काम में जुट जाते! सात बरस तक हवा-धूप-पानी में अथक परिश्रम करने के बाद घासफूस की झोंपड़ियों ने सिर उठाया।

इन भाइयों को एकाकी होकर कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। इन बस्तियों की तरफ न किसी कार्यकर्ता ने आँखें उठायीं, न किसी सरकारी कर्मचारी को इनकी याद आयी। पहले-पहल भूदान-कार्यकर्ता ही ग्रामदान का संदेश लेकर वहाँ गये, तो उनकी आँखों में खुशी की लहरें उठीं कि आखिर ये भाई तो आये। हमने भी आशा नहीं की थी कि ये लोग इतने जल्दी ग्रामदान के लिए तैयार हो जायेंगे! लेकिन श्री पिराजी, भोगलेजी जैसे बरसों से समाजवादी निष्ठा से लगातार काम करने वाले और इन गाँवों को बसाने में प्रेरणा और सहायता देने वाले कार्यकर्ताओं ने, जो खुद भी वहीं रहकर किसानी कर रहे हैं, ग्रामदान के विचार को स्वयं अपनाया। इस निर्णय में आपकी पत्नी श्रीमती चंपाबाई भोगले का, जो इस बार विधान-सभा की सदस्या निर्वाचित हो चुकी हैं, हाथ भी कम नहीं है। गरीब हरिजन लड़के-लड़कियों की शिक्षा के लिए सहायता प्राप्त करने में काफी परिश्रम वे उठाती हैं। भोगले-दम्पति की हार्दिक सहानुभूति और श्री प्रभाकर मराठे तथा श्री रामचंद्रराव कदम की अनूठी लगन से ये ग्रामदान सुलभ हुए।

हम सोच रहे थे कि पू० विनोबाजी के मैसूर-प्रवेश के अवसर पर क्या बेलगाँव जिला पिछड़ा हुआ ही रहेगा ? पर अब इस जिले में भी ग्रामदान का झरना फूट निकला है। वह भी हरिजन भाइयों के दिल से, जो सदियों से पिछड़े हुए, दबाये हुए हैं। हम हमेशा कहते रहते हैं कि सर्वोदय याने अंत्योदय। आज ये निचले सिरे के लोग जाग उठे हैं और नवसमाज के निर्माण में हिस्सा लेने के लिए आगे आ रहे हैं। भूमि-क्रान्ति-आंदोलन की यही खासियत है कि उसमें जनसाधारण को पुरुषार्थ करने का अवसर मिल रहा है। उन्हींके त्याग और पुरुषार्थ से यह क्रान्ति संभव होगी।

ग्रामदान में प्राप्त गाँवों का विवरण

	गाँव	तालुका	जिला	कुल भूमि	कुटुंब-संख्या	जनसंख्या
(१)	सुरपुर	खानापुर	बेलगाँव	२८१ ए.	२५	१७५
(२)	करीकट्टी	,,	,,	१८१ ए.	३५	—

कर्नाटक का स्वर्ग : पर्वतश्रेणियों का कूर्ग !

(बाबूराव कामत)

कालीकत होकर हमारी पदयात्रा गुंडलूपेट पहुँचने के पहले वायनाड़ का जंगल पार करना पड़ता है। वायनाड़ कूर्ग का हिस्सा था। वहाँ चाय के बगीचे जब गोरे लोगों ने बनाये, तब मजदूरी के लिए त्रावणकोर के भूमिहीन और व्यापार के लिए कोचीन के 'मापला' आ बसे। कूर्ग की जनता अब तो अल्पसंख्य ही है और अल्पता में उन्हें संतोष भी है। इसीलिए बची-खुची खेती में वे एक अलिप्त ऋषि के जैसा जीवन बिता रहे हैं। यहाँ पानी बहुत गिरता है। ऊँचाई भी काफी है, इसलिए गरमी गायब हो गयी। धान के हरे-भरे खेत और चाय के बगीचों के सुन्दर दृश्यों से हमारी पदयात्रा मानो एक सुख-संवेदना बन गयी। यहाँ की शिक्षित जनता नवविचार जानने और आतिथ्य करने के लिए अत्यंत उत्सुक है।

लेकिन अभी कूर्ग का हृदय देखना बाकी था। वह योग अचानक पा सका। कूर्ग के एक युवक, श्री गणपति विनोबाजी के आने के पूर्व ही पदयात्रा से हममें आ मिले। उनकी इच्छा थी कि कूर्ग में भूदान-विचार खूब फैलाया जाय। उनके साथ मैं भी हो लिया।

वायनाड़ में जैसे चाय, वैसे यहाँ कॉफी ने ब्रिटिश प्लांटर्स को खींचा। लेकिन स्वराज्य के बाद अधिकतर गोरे जमींदार चले गये और उनकी जगह कूर्गी और कुछ बाहर के धनिकों ने ले ली है। शोषण, ऐयाशी और व्यसन में यह काला साहब भी कम नहीं!

कूर्ग का मूल नाम है 'कोडगु' याने देने वाला। दक्षिण में मलबार और मद्रास और अन्यत्र फैला हुआ मैसूर कूर्ग के नदी-नालों से पानी पाता है। नेपाली, गुरखा, पंजाबी, सिख, बंबई के मराठे आदि के जैसे कूर्गी सिपाही भी मशहूर हैं। जनरल करिअप्पा और तिमय्या कूर्ग की ही देन हैं। यहाँ की चाय, कॉफी और काली मिर्च दुनियाभर के बाजारों में गयी है। कूर्ग को राज्यकर्ताओं ने किसी प्रांत में शरीक न किया, ताकि यहाँ की शक्ति और समृद्धि का पूरा लाभ उठा सकें। यहाँ की संस्कृति अलग है, यह बहाना बनाकर इस मुजलाम्, मुफलाम् भूमि का गोरे और काले पूँजीपतियों ने बरसों तक बगीचों की ठेकेदारी से लाभ उठाया।

स्वराज्य-प्राप्ति के बाद भी कूर्ग अछूता ही रहा, जिससे ठेकेदारी अबाधित चलती रही। स्वतंत्र संस्कृति की रट लगाने वाले ये मालदार पाश्चिमात्यों का ही अंधानुकरण कर रहे हैं। लेकिन यहाँ की जनता उतनी अज्ञान, दरिद्री और अस्वच्छ नहीं है। उदार प्रकृति से पूरा लाभ उठाने लायक मनुष्य-बल यहाँ न होने की वजह से मंगलूर, मलबार और मैसूर के कंगाल यहाँ के जंगल में मंगल बनाने में काफी कामयाब हुए हैं। यहाँ के पहाड़ों पर की एकाध चट्टान भी ढीली रहे, तो नीचे गिरती है! तब मानव का क्या पूछना! आबोहवा का यहाँ जबरदस्त तकाजा है कि कोई भी गाफिल न रहे, गरीब न रहे, गंदा ही रहे।

इन विशेष परिस्थितियों में ग्रामदान का संदेश वहाँ के चुनिंदे विचारवंतों को भी कैसे भाता ? सर्वसत्ताधारी जमींदार और उनके कृपाछत्र में रहनेवाले मजदूर, इन दोनों को भी इस नवक्रांति के दीर्घ परिणाम नजर अंदाज नहीं हैं। फिर भी अब समता का जमाना आ रहा है, इसकी आहट उन्हें भी लग चुकी है। अब तो वहाँ इन दिनों तीन कार्यकर्ता भी नहीं हैं। लेकिन एकाध जो काम में लगे हैं, वे एकाकी नहीं हैं। एकाग्रता से काम में जुट जायें, तो सितंबर तक एक के अनेक हो जायेंगे। ऐसे प्रदेश में विनोबाजी घूम रहे हैं और कार्यकर्ताओं के लिए काम करने का सुनहरा अवसर इस प्रकृतिरम्य प्रदेश में दे रहे हैं।

तीन आवश्यक बातें

हमने तीन बातें बतायीं : (१) राजनीति का विचार हमने छोड़ा नहीं है, परन्तु मूलभूत परिवर्तन का काम पार्टी-पॉलिटिक्स या पॉवर-पॉलिटिक्स नहीं कर सकते अर्थात् बुनियादी काम करने में वे असमर्थ हैं। वह लोकशक्ति के जरिये और पक्षातीत लोकनीति के जरिये ही हो सकता है। (२) सामूहिक सुधार का काम जरूर करना है, परन्तु वह समग्र दृष्टि से करना है। असमग्र या सेवा का एक टुकड़ा लेकर नहीं करना है। वैसा करेंगे, तो काम नहीं होगा, थोड़ा-सा काम होगा। (३) रचनात्मक काम भी संकल्प-शक्ति से होगा, बाह्य मदद मात्र से नहीं होगा।

—विनोबा

www.vinoba.in

लाइसेन्स नं. ए. ३५४ रजिस्टर्ड नंबर ए. ३४ (पहले से डाक-महसूल दिये बिना भेजने का परवाना प्राप्त) भूदान-यज्ञ, शुक्रवार, १३ सितंबर, '५७

फिज़ा कैसे बदलें ?

(द्वारको सुंदरानी)

कार्यकर्ता निष्ठा और श्रद्धा से, हिम्मत और मुहब्बत से जनता-जनार्दन के पास पहुँचे, तो वे भर-भर कर पायेंगे, इसमें रंचमात्र भी शक नहीं । गया नगर में यात्रा का विचार श्री जयप्रकाश बाबू ने रखा । एक महीना हम लोगों ने इस काम में दिया । गया में इसके पहले विशेष परिचय भी नहीं । फिर कई महीनों से कार्य भी बन्द था । यहाँ तक कि शुरू में कई लोगों से सुनने को मिला कि गया में क्या, भूदान-काम तो सारे देश में बन्द-सा है । ऐसी हालत में जब उनके बीच हम जाते, तो लोग बात नहीं करते । सार्वजनिक कार्यकर्ता यद्यपि श्री जयप्रकाशजी सभा में आते थे, फिर भी इस कार्य के प्रति उदासीन दीखते थे, परन्तु श्री जयप्रकाश बाबू के त्याग, प्रेम और क्रान्ति की निष्ठा ने जनता तथा कार्यकर्ताओं में फिर से चेतना पैदा की । पहले यात्रा-खर्च के लिए हमने कुछ चन्दा इकट्ठा करना चाहा, पर लोगों ने उसको पसन्द नहीं किया । परन्तु जब सक्रिय हो गये, तब तो अन्तःप्रेरणा से ४० लोगों को भोजन दिया और यात्रा का खर्च करीब-करीब उन्होंने दिया । सारे नगर में वही १९५३ वाली चहल-पहल जगी । श्री जयप्रकाश बाबू पर फूल-मालाओं की तो बारिश बरसती थी । हर मुहल्ले में श्री जयप्रकाशजी पहुँचे । हर वर्ग से उनका सम्पर्क आया—विद्यार्थी, अध्यापक, व्यापारी, दूकानदार, ट्रक चलाने वाले, दफ्तरवाले, मज़दूर और कारखानेवाले । मुसलमान और महिलाएँ, काँग्रेस और समाजवादी पक्षवाले, यहाँ तक कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक-संघवाले भी सम्पर्क में आये । इन सबका जो प्रेमपूर्ण सहयोग मिला, वह देखकर श्री जयप्रकाश बाबू इतने मस्त हो जाते कि अपने शरीर से बेसुध हो जाते थे । किसी रोज तो १४ सभाएँ हुईं और मिलने के लिए तो शायद पचास स्थानों पर पहुँचे होंगे । आखिर शरीर के सहन करने की मर्यादा आ गयी और वह अस्वस्थ हो गया । फिर भी श्री जयप्रकाश बाबू कहाँ अस्वस्थ थे ? वे तो काम करते रहे, शरीर बेचारा पीछे-पीछे चलता रहा । कुशल सवार ने जब लगाम तानी, तो घोड़े की क्या मजाल !

वे यात्रा सुबह साढ़े सात बजे आरम्भ करते थे और साढ़े बारह बजे तक वह चलानी पड़ती थी, यद्यपि समय ग्यारह बजे समाप्ति तय थी । फिर तीन से साढ़े चार बजे तक विशिष्ट वर्गों की सभाएँ होती थीं । पाँच से साढ़े छह तक आम सभा उसी वार्ड में होती थी । शाम को साढ़े सात बजे थियोसोफिकल मॉडिल स्कूल में विचार-शिविर होता था । यह यात्रा का महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम रहा । आठ रोज़ तक दो सौ लोग प्रतिदिन आते रहे और श्री जयप्रकाश बाबू ने सर्वोदय समाज के हर पहलू पर अपने विचार व्यक्त किये ।

कुल ७५ सभाओं में लगभग ७ हजार लोगों ने भाग लिया । ९८ कार्यकर्ताओं ने आंशिक समयदान दिया । करीब ३००) का साहित्य बिका । एक एम० ए० के विद्यार्थी ने जीवनदान दिया । उसके पिताजी ने भी सहर्ष इस काम में लगने की इजाजत उसे दी ।

इस यात्रा के साथ गांधी-निधि की तरफ से विद्यार्थियों का शिविर श्री रमावल्लभ चतुर्वेदीजी के नेतृत्व में चलता रहा । इस अवसर पर द्वारका के पदयात्री भी आ पहुँचे थे ।

इसके पहले जब कभी मैं सुनता था कि सन् '५७ में क्रान्ति करनी है, तो मुझे नहीं लगता था कि इतने छोटे अरसे में कोई क्रान्ति हो सकती है । लेकिन इस ढङ्ग से इन आठ दिनों में काम किया गया कि फिज़ा ही बदल गयी । अब तो इसे मानने में क्या कठिनाई है कि भारत की फिज़ा चार मास में बदल सकती है ?

अब आगे के कार्य को चलाने के लिए लोगों ने एक "नगर सर्वोदय-परिषद्" बनायी है । काम शीघ्र ही चालू किया जायगा ।

—**कोटा जिले की पीपलदा तहसील** के पाँच गाँवों के २३ परिवारों में २६० बीघा भूमि का वितरण किया गया तथा २४० बीघा भूमि गोचर उपयोग के लिए रखने का निर्णय किया गया ।

—**रत्नागिरी जिले** के कार्यकर्ताओं की ४६ प्रचार-सभाएँ **बंबई में** हुईं । २५०० रु. की साहित्य-बिक्री हुई । ४५० ग्राहक हुए । ४४ संपत्तिदान-पत्र मिले । २०० एकड़ भूदान मिला । पूरा समय देने वाले दो कार्यकर्ता प्राप्त हुए ।

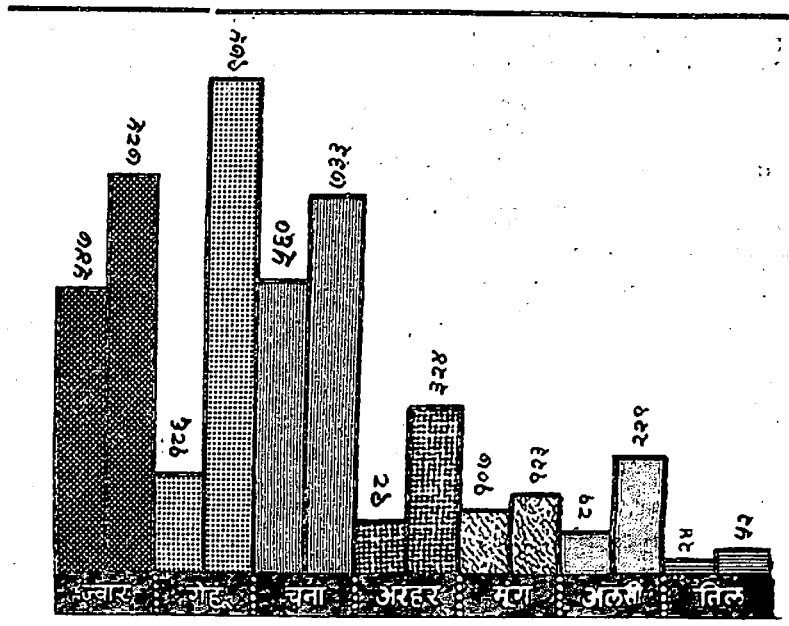

ग्रामदानी गाँव मंगरौठ (उत्तर प्रदेश) की उत्पादन-प्रगति (मनों में)
सन् १९५३-५४ और सन् १९५५-५६

—**नासिक जिले में** २० से ३१ जुलाई तक प्रचार-मुहिम हुई । नांदगाँव में दो दिन का शिविर हुआ । पूर्व-पश्चिम खानदेश, नगर, बीड आदि जिले से ६५ कार्यकर्ता आये थे । विभिन्न गाँवों में ५००० पुस्तकों की बिक्री की । १३६ ग्राहक बनाये । १७०० फुटकर अंक-बिक्री हुई । ६० सभाओं में प्रचार किया गया ।

—**धौलपुर** के ग्राम सालैपुर (तह० सैपऊ) में जुलाई के अंतिम सप्ताह में १६० बीघा भूमि का वितरण किया गया ।

सेवाग्राम में अ० भा० भूदान पदयात्रा की पूर्णाहुति

ता० २ फरवरी, १९५६ को कन्याकुमारी से जिस अखिल भारतीय भूदान पदयात्रा का प्रारम्भ हुआ था, वह २ अक्टूबर, १९५७ को सेवाग्राम में पूर्ण होने जा रही है । इस प्रसंग पर वहाँ पदयात्री-दल अपना अब तक प्राप्त सारा हविर्भाग बापू के स्मृतिचरणों पर अर्पित करेगा । अन्य प्रार्थनादि कार्यक्रम भी होंगे । कार्यकर्ताओं से इस प्रसंग पर उपस्थित रहने की प्रार्थना है ।

रेल कन्सेशन के लिए कृपया निम्न पते पर लिखें—

अ० भा भूदान-पदयात्रा, मार्फत श्री गान्धी आश्रम, जबलपुर ।

कटनी, ता० ५-९-५७ —— —चेरियन थॉमस, पदयात्रा-संगठक

विनोबाजी और श्री वल्लभस्वामी का पता : मार्फत सर्व-सेवा-संघ, चामराजपेट, बंगलोर ।

विषय-सूची

१.	उद्योग-पतियों के खोखले दावे !	वैकुंठलाल मेहता	१
२.	ग्रामोद्योगों में यंत्रशक्ति और बिजली	अ० वा० सहस्रबुद्धे	३
३.	ललमटिया गाँव का कायापलट !	गोकुलभाई भट्ट	५
४.	शान्ति की शक्ति क्यों नहीं बन पा रही है ?	विनोबा	६
५.	वेतन या भत्ता ?	दादा धर्माधिकारी	६
६.	खादी-काम संबंधी नीति का आधार क्या हो	सिद्धराज ढड्ढा	७
७.	भूदान-आरोहण की समीक्षा	महावीर प्रसाद केड़िया	८
८.	अमृत-परमाणुओं का तरीका	विनोबा	९
९.	साम्ययोग के पंछी	सुरेशराम भाई	९
१०	बिहार-प्रादेशिक सर्वोदय-सम्मेलन-चर्चासार		१०
११	कर्नाटक-प्रवेश	महादेवी	१०
१२	ग्रामदान-क्रान्ति और हरिजन भाई	दिवाकर हरिदास	११
१३	कर्नाटक का स्वर्ग : पर्वतश्रेणियों का कूर्ग	बाबूराव कामत	११
१४	फिजा कैसे बदलें ?	द्वारको सुंदरानी	१२

सिद्धराज ढड्ढा, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव-भूषण-प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित । पता : राजघाट, काशी; टे० नं० १२८५

www.vinoba.in